आयुर्वेदमार्तण्ड श्रीस्वामिलक्ष्मीरामाचार्या
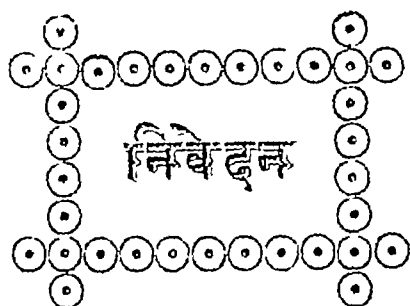
सन्त-साहित्य-सुमनमाला के दो पुष्प "बषना जी की वाणी" और "गरीबदास जी महाराज की वाणी" के पश्चात यह तृतीय पुष्प "पंचामृत" आपको समर्पित किया जारहा है। "पचामृत" मे पाच महात्माओ की रचना का आस्वाद आपको प्राप्त होगा। ये रचनायें विषय विशेष की नहीं है। इनका विषय चेतावणी तथा शिक्षा उपदेश है।

पाच में वाजिन्द जी दादू जी महाराज के शिष्य थे, शेष चार भीषजन, बालकराम जी, छीतर जी तथा खेमदासजी दादू जी महाराज के पोता-शिष्य थे।

इनकी रचना से प्रतीत होता है कि ये केवल साधक महात्मा ही नहीं अपितु अच्छे शास्त्रमर्मज्ञ व सुशिक्षित विज्ञ पुरुष थे। विषय, उदाहरण, भाषा, शब्द सब से विज्ञता प्रदर्शित होती है। इस पचामृत में इनकी एक एक रचना ही दीगई है, वैसे इनकी और भी रचनायें हैं, जिन का प्रकाशन और किसी संग्रह द्वारा किया जायगा। अब संक्षेप में इनकी जीवनी, रचना-काल व रचना का दिग्दर्शन करा देना उचित है।

१-भीषजन जी

भीखजन जी शेखावाटी के फतहपुर कसबे के निवासी थे। जातिके ब्राह्मण, उपजाति आचारज थी। दादू जी महाराज के शिष्य बारह हजारी सन्तदास जी, फतहपुर आते जाते रहते थे। महाराज के शिष्यों में प्रागदास जी बियाणी, सन्तदास जी बारह हजारी, सुन्दरदास जी छोटे तथा जनगोपालजी ये सब वैश्य जाति के थे। इनमें जनगोपाल जी को छोड़ शेष तीनां गुरु भाई प्राय फतहपुर में एक साथ रहा करते थे। वैसे प्रयागदास जी का निवासस्थान डीडवाणा, सन्तदास जी का चाँवड्या व सुन्दरदाम जी का दौसा था। भीखजन जी सन्तदास जी के शिष्य थे। सन्तदास जी स्वय महान् साधक तथा त्यागी थे, वैसे ही वे विशिष्ट रचना कार भी थे। रचना की अधिकता के कारण ही उनकी विशेष सज्ञा बारह हजारी हो गई थी। सन्तदास जी दादू जी महाराज के किस सम्वत् में शिष्य हुये यह यथार्थ रूपसे कह सकना शक्य नहीं। पर जनगोपाल-जी की व माधोदास जी की जन्मलीलाओं में एतद्विषयक जो कुछ आभास मिलता है उससे यह निश्चय हो सकता है कि सम्वत् १६३० से अन्त तक महाराज के शिष्यों का शिष्यत्व स्वीकारकाल था।

सन्तदास जी भी साभर से आम्बेर आने के बाद शिष्य हुए थे। महाराज दादू जी का - आम्बेर में रहने का समय, सोलह सौ बत्तीस से चवालीस तक का है। इसी काल में सन्तदास जी ने महाराज का शिष्यत्व स्वीकार किया था। शिष्य बनने के पश्चात् ही वे फतहपुर की ओर प्रागदास जी तथा छोटे सुन्दरदास जी से मिलने जाया करते थे।

भीखजन जी ने तभी उनके सत्संग का लाभ उठाते २ शिष्यत्व स्वीकार किया होगा ।

इस अनुमान के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि भीखजन जी सोहलसौ चालीस और पचास के बीच सन्तदासजी के शिष्य हुये । उनका रचनाकाल सत्रहवीं शताब्दी का अन्तिम भाग है ।

रचना—

भीखजन जी की अबतक दो रचनायें प्राप्त हुई हैं । पहिली रचना है 'सर्वंग बावनी' जिसका कि प्रकाशन पचामृत में किया गया है । दूसरी रचना है "भारती नाम-माला" यह अमर कोश का हिन्दी में पद्यानुवाद है, इन से भिन्न और भी कोई रचना इनकी है या नहीं यह निश्चय से अभी नहीं कहा जा सकता । संभावना यही होती है कि इनकी और भी रचनायें होनी चाहिये ।

सर्वंग बावनी की सम्वत् १६८३ की पौष शुक्ला पूर्णिमा को समाप्ति हुई यह उन्हीं के कथन से सिद्ध होता है जैसा कि उनने बावनी की समाप्ति पर लिखा है ।

छप्पय—

सम्वत् सोलह से जु वरष, जब हुतो तैयासी ।
पोष मास पख श्वेत, हेत दिन पूर्णमासी ॥
शुभ नक्षत्र गुण कन्यो, धन्यो जो अक्षर आरम्भ ।
कथ्यो भीखजन ज्ञाति, ज्ञाति द्विज कुल आचारम्भ ॥

सब सन्तन सों विनती, औगण मोर निवाड येह ।

मिलतै सो मिलने रहा, अन मिलते अक गैवारियेह ॥ १ ॥

यह उद्धरण बावनी का त्रेपनवाँ छन्द है । भीखजनजी सन्तदासजी के शिष्य थे इस का प्रमाण भी उन की अपनी रचना है । अन्तिम छन्द चौपनवें मे तथा प्रारभ के दूसरे छन्द मे उनने इसका स्पष्ट उल्लेख किया है, जैसा कि निम्नलिखित पक्तियों मे सिद्ध होता है—

बावनी छन्द २, दूसरा छप्पय—

वै अन उप्पम गमि अगमि, कहि उप्पम उपजै त्रिया ।

कछुक बखानत भीखजन, सन्तदास स गुरु कृपा ॥ १ ॥

बावनी छन्द ५४ वा—

सर्व अग गुन भेद कथी, बावनी विविध परि ।

सन्तदास सतगुरु प्रसाद, भाष्यौ रसनात करि ॥

इन उद्धरणो से स्पष्ट है कि भीखजनजी सन्तदासजी महाराज के शिष्य थे । ‘ भक्तमालाकार ’ राघोदासजी ने भी महाराज दादूजी के नातियो पोता शिष्यो के विवरण मे भीखजनजी के लिये निम्न लिखित पक्ति में लिखा है ।

छप्पय— भीख बावनी प्रसिद्ध, सु तौ सारे जग हाई ।

ता माँहि सब भाव, जाणि भावे सो सोई ॥

सतदास गुरुधार करि, राघो हरि मे मिल गये ।

स्वय भीखजनजी के तथा राघोदासजी के उद्धरणो के पश्चात् अन्य किसी के प्रमाणों की आवश्यकता नहीं है ।

सर्वंगी बावनी के दो वर्ष पश्चात् यानी संवत १६८५ कुँवार की पूर्णिमा को 'भारती नाममाला" का आरंभ हुआ। दोनों ग्रन्थों का निर्माण फतहपुर में ही हुआ, यह भी उन्हीं के कथन से सिद्ध होता है। "भारती नाममाला" के आरंभ के तीन दोहे इस के प्रमाण हैं।

दोहा—बागड मध गुण आगणा सुवस फतहपुर गाँव।
चक्रवर्त्ति चौहान नृप, राज करे तिहिं ठाँव॥
सरस सकल रससौं भरी, करी भीखजन जान।
धर्‌यो नाम तिहिं भारती, भाष्यो ग्रन्थ प्रवान॥
सोलह सै पिच्यासि ये सम्वत् यहै विचार।
सेत पच्छ राका तिथि, कवि दिन मास कुँवार॥ १॥

"भारती नाममाला" दोहे छन्द में है और वह पाँचसौ सत्रह दोहे तथा आठ कवित्त में समाप्त हुई है, जैसा कि समाप्ति पर उनने निम्न दोहे द्वारा व्यक्त किया है।

संख्या सब गुण दोहरा, कृत 'जन भीख" सुचेत।
सत्रह ऊपर पाँचसौ आठौं कवित महेत॥ १॥

भीखजनजी की रचना कैसी है, इसके बारे में अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं, आप बावनी के छन्दों में उनकी रचना के औचित्य को सर्वत्र प्रत्यक्ष देखेंगे।

भीखजनजी की भाषा प्राञ्जल व परिमार्जित है। उनने देशिक शब्दों का तथा अपभ्रंश शब्दों का बहुत ही कम प्रयोग किया है। बावनी का

निर्माण वर्णमाला के अक्षर क्रम से है। सम्पूर्ण बावनी में छप्पय छन्द का प्रयोग है।

सम्वत् पिच्यासी के पश्चात् भी इनने रचना अवश्य की होगी, पर वह जब तक प्राप्त न हो जाय तब तक तद्विषयक कुछ कहा जा सकता नहीं। बावनी के छन्द तथा भारती नाममाला से यह तो प्रतीत हो ही जाता है कि वे अच्छे कवि थे।

भारती नाममाला की प्रतिलिपि सम्वत १७२३ जेठ सुदी १२ की है। इस लिपिकाल से भी भीषजनजी का समय उपर्युक्त निश्चित् था यह सिद्ध होता है।

बालकरामजी

पंचामृत में दूसरी रचना बालकरामजी के कवित्त हैं। इन की सख्या पचपन है। ये कुँडलिया, मनहर तथा इन्दव छन्दों में है। विषय इस में भी एक न होकर शिक्षा तथा उपदेश की व्यापकता का है। रचना यह भी सुन्दर सुघड़ है। भाषा परिमार्जित है। देशिक तथा अपभ्रंश शब्दों के प्रयोग इन में भी बहुत कम हैं। भाषा का रूप प्रधानतया खड़ी बोली में है। कहीं२ ब्रजभाषा की पद्धति के भी शब्द प्रयुक्त हो गये हैं। कविता का काल मेरी समझ में अठारहवीं शताब्दि का पूर्व या मध्यम भाग होना चाहिये। इनकी अभी तक केवल एक यही रचना प्राप्त है। इसमें रचना के काल आदिका कोई उल्लेख नहीं है। पर अपर प्रमाणों से उपर्युक्त काल का समर्थन होता है। कारण बालकरामजी, छोटे सुन्दरदास जी के शिष्य थे। छोटे सुन्दरदास जी महाराज

दादूजी के ब्रह्मलीन होने के समय सात वर्ष के थे। उनने पर्याप्त काल तक बनारस में विद्याध्ययन भी किया था। अध्ययन के पश्चात् वे जब इधर लौटे हैं तब सत्रहवीं शताब्दी की समाप्ति का अन्तिम काल चलरहा हो। सुन्दरदासजी की अवस्था पैंतीस वर्ष की हुई हो उससे पहिले तो कोई शिष्य शायद बना न हो। संवत् १६८८ मे सुन्दरदासजी पैंतीस वर्ष के लगभग थे। बालकरामजी नें इस समय के बाद ही उनका शिष्यत्व स्वीकार किया होगा। ये शिष्य बनते ही रचना करने लग गये हों यह संभव नहीं। अतः इनका रचना काल अठारहवीं शताब्दी का पूर्व पाद उचित है।

सुन्दरदासजी महाराज परमविद्वान् थे, वे सभी शास्त्रों के जानकार थे। उनका ज्ञान-समुद्र इस का ज्वलन्त प्रमाण है। सुन्दरदासजी महाराज जैसे योगी, साधक व परम विद्वान् के शिष्य होने के नाते बालकराम जी का विज्ञ होना स्वाभाविक है। अपने गुरु की तरह वे भी अद्वैत ब्रह्म के उपासक थे। उनकी रचना मे स्थान२ पर इस सिद्धान्त का आभास स्पष्ट सामने आता है। दादू जी महाराज नें ईश्वरोपासना में धर्म, जाति, वर्ण का कोई महत्व स्वीकार नहीं किया था उसी तरह इनने भी इस सिद्धान्त मे अपनी सत्यनिष्ठा का प्रमाण दिया है। इनकी रचना और होनी चाहिये। इस अनुमान की सत्यता भक्तमालाकार के उल्लेख से भी सिद्ध होती है जैसा कि उनने 'बालकराम जी' के बारे में व्यक्त किया है।

कुंडलिया—करै हँस ज्यूं अंस सार असार नियारे।
आन देव को त्याग एक परब्रह्म संभारे॥

दो

किये कवित्त पट् तुकी, बहुरि मनहर अरु इन्दव ।
कुंडलिया पुनि मांय, भक्ति विमुखन को निन्दव ॥
राखो गुरु पन्थ म निपुन, सतगुरु सुन्दरनाम ।
दादू दीनदयाल के, नाती बालकराम ॥

३-४ छीतरजी खेमदासजी —

पंचामृत में तृतीय चतुर्थ रचनायें छीतरजी के इन्दव व खेमदास जी के रेखते [मनहर] हैं । छीतरजी के सवैयों की संख्या छत्तीस व खेमदास जी के मनहर सोलह हैं । छीतरजी की रचना की संज्ञा 'गुरु वन्दना' कर सकते हैं । कारण छीतरजी ने ये सब अपने दादा गुरु महाराज दादूजी की महत्ता व्यक्त करने में लिखे हैं । इन्हे भेंट के सवैये भी कहते हैं । खेमदासजी की रचना का विषय पूर्व रचनाकारों की तरह शिक्षा उपदेश है । दोनों रचनायें छोटी छोटी ही हैं पर उसी में रचनाकारकी स्थिति का रूप तुरन्त सामने आ जाता है । भाषा शुद्ध व प्रांजल प्रवाहमय है ।

छीतरजी खेमदास जी की और भी रचनायें है जो प्राप्य हैं । छीतरजी की रचनायें विरक्त भगवानदास जी ऊमरावालों के पास जो वाणी जी की संग्रह पुस्तक है उसमें मौजूद हैं । मैंने हरिद्वार मे वे रचनायें उनकी पुस्तक मे देखी थीं । मेरा संकल्प उनकी उन सब रचनाओं को इन सवैयों के साथ ही प्रकाशित करने का था, पर वह पुस्तक समय पर मिल न सकी, अतः उनका प्रकाशन इस रचना के साथ न किया जा सका । वे रचनाये संख्या मे कितनी हैं यह भी ठीकर स्मरण नहीं है पर संख्या

छे सात से कम नहीं है। विषय उनका भिन्न२ है। इसी तरह खेमदास जी की भी रचनाये और हैं उनमें से १ शुक सम्वाद २ गोपीचन्द वैराग्य बोध ३ धर्म सम्वाद ४ ज्ञान चिंतावणि तथा ५ भयानक चिंतावणि प्राप्य हैं। दो रचनायें और भी इनकी इस संग्रह में प्रकाशित की जा रही थी पर वह मेटर नष्ट हो गया वे रचनायें जगनदास जी जमात महावीर वालों की वाणी-सग्रह में से उतारी गई थी। उनमें एक का नाम "राविया बिसरे का पद्धतिनामा" था। दूसरा "नसीहत नामा" था। दोनों चौपाई छन्दों में थे। उनके धर्म सम्वाद, शुक सम्वाद, गोपीचन्द वैराग्य-बोध भी दोहे चौपाई छन्दों में हैं। संभव है इन उभय महानुभावों की और भी रचनायें प्राप्त हों।

भाषा के व्यवहार में दोनों की दो धारायें हैं। छीतरजी की रचना मे उस समय की खड़ी बोली प्रधान हिन्दी का प्रमुख प्रयोग है। उनकी रचनाओं में जिस भाषा का प्रयोग अन्य रचनाओं मे है वह संस्कृत वाङ्मयोपजीवित है।

खेमदासजी की भाषा में उर्दू फारसी के भी अनेक शब्द प्रयुक्त हुये हैं। 'राविया विसरे का नामा, नसीहत नामा इनमे तथा पंचामृत में आये सोलह मनहरों से यह स्पष्ट व्यक्त होता है कि वे उर्दू तथा कुछ फारसी के भी जानकार थे।

उनके प्रयोग किये हुये ये शब्द नेकी, वर्दी, फहीम, यार, आदम. कादर, बदजवा, सिदक, पाक, काफिरी, गुमान, भिस्त, निशानी, हकीकी. खसम 'आदि उपरोक्त संभावना के पूरे समर्थक हैं। मनहर छन्द मे प्रत्येक पद व प्रत्येक लाईन मे इस तरह के शब्दों का प्रयोग हुआ है।

औ

इन शब्दों के व्यवहार से उनकी उर्दू फारसी की जानकारी ही नहीं अपितु अपने गुरु रज्जबजी महाराज की रचना पद्धति के अनुकरण की भी स्पष्ट अभिव्यक्ति होती है।

छीतरजी व खेमदासजी दोनों गुरु भाई थे। दोनों ही दादूजी महाराज के परम प्रमुख शिष्य रज्जबजी महाराज के शिष्य थे। रज्जबजी, महाराज के साधक शिष्यों में अग्रणी थे। उनने अपने गुरु दादूजी का पूरा २ अनुकरण किया था। वे पठान जाति के मुसलमान थे। फिर भी उनने साधना के क्षेत्र में मजहब के महत्व का सर्वथा परित्याग कर दिया। उननें राम और खुदा को एक ही समझा। जाति मनुष्य की मानीं। उनकी रचना महाराज के शिष्यों की रचना में अपना स्वतंत्र स्थान रखती है। रज्जबजी की रचना में भी उर्दू फ़ारसी के बहुत शब्द व्यवहृत हुये हैं। खेमदासजी ने सम्भव है अपने गुरुजी से ही उर्दू फ़ारसी का ज्ञान प्राप्त किया हो। साथ ही रचना में भी रज्जबजी की तरह उर्दू फारसी का सम्पुट बराबर लगाया है। रज्जबजी महाराज दादूजी महाराज की वाणी के विशेष मर्मज्ञ थे रज्जब जी की वाणी को दादू जी महाराज की वाणी का भाष्य माना जाता है। अपने गुरु के अनुरूप शिष्य होने के नाते खेमदासजी भी वाणी के मर्मज्ञ माने गये थे। भक्तमालकार राघोदासजी के विवेचन से दोनों गुरु भाइयों का शिष्यत्व व योग्यता की स्थिति स्पष्ट समझ में आ जाती है। छीतरजी का नामोल्लेख सम्पूर्ण शिष्यों के साथ किया गया है जैसा कि इस पद्य से प्रतीत होता है।

छप्पय—दीरघ गोविन्ददास, पाटि अंबरावर राजै।
खेम सरस सम्वाद, तास सिष तहाँ विराजै॥

हरीदास छीतर जगन, दामोदर केशो ।
कल्याण द्वै बनवारी, राम रत गहिमत वेसो ॥
जन राघो मंगल रात दिन, दीसै दे दे कार अन्न ।
इमि रज्जब अज्जब महन्त के, भले पिछो पे साध सन्न ॥ १ ॥

उपरोक्त पद्य में रज्जबजी के प्रमुख शिष्यों के सब के नाम दे दिये गये हैं इन्हीं मे छीतरजी का व खेमजी का नाम आया है। खेमदासजी सरवाड में स्वतंत्र रूप से रहते थे।

भक्तमालाकार ने खेमदासजी का विशेष परिचय भी दिया है। जैसा कि इस 'मनहर' कवित्त से ज्ञात होता है—

महन्त रज्जब के अज्जब शिष्य खेमदास,
जाके नेम नित प्रति व्रत निराकार को।
पंथमें प्रसिद्ध अति देखिये दैदीप्यमान,
वाणी को विनाणी अति माफिन मे भार को ॥
रामत मेवाड़ मे मेवासी मुख सोहे बात,
बोलत खरो सुहात वेतवा विचार को।
राघो सारो रहणी को कहणी सुकृत अति,
चेतन चतुर मति भेदी सुखसार को ॥

यह पद्य आभास कराता है कि खेमदास जी निराकार के दृढ़ उपासक, अत्यन्त शील सम्पन्न, वाणी के विशेषज्ञ व रहणी कथणी में एक रूप थे। रंभा शुक सम्वाद के आरंभ में इनने रज्जब जी महाराज के गुरु

औ

इन शब्दों के व्यवहार से उनकी उर्दू फारसी की जानकारी ही नहीं अपितु अपने गुरु रज्जबजी महाराज की रचना पद्धति के अनुकरण की भी स्पष्ट अभिव्यक्ति होती है।

छीतरजी व खेमदासजी दोनों गुरु भाई थे। दोनों ही दादूजी महाराज के परम प्रमुख शिष्य रज्जबजी महाराज के शिष्य थे। रज्जबजी, महाराज के साधक शिष्यों में अग्रणी थे। उनने अपने गुरु दादूजी का पूरा २ अनुकरण किया था। वे पठान जाति के मुसलमान थे। फिर भी उनने साधना के क्षेत्र मे मजहब के महत्व का सर्वथा परित्याग कर दिया। उनने राम और खुदा को एक ही समझा। जाति मनुष्य की मानी। उनकी रचना महाराज के शिष्यों की रचनामे अपना स्वतत्र स्थान रखती है। रज्जबजी की रचना मे भी उर्दू फारसी के बहुत शब्द व्यवहृत हुये हैं। खेमदासजी ने सभव है अपने गुरुजी से ही उर्दू फारसी का ज्ञान प्राप्त किया हो। साथ ही रचना में भी रज्जबजी की तरह उर्दू फारसी का सम्पुट बराबर लगाया है। रज्जबजी महाराज दादूजी महाराज की वाणी के विशेष मर्मज्ञ थे रज्जब जी की वाणी को दादू जी महाराज की वाणी का भाष्य माना जाता है। अपने गुरु के अनुरूप शिष्य होने के नाते खेमदासजी भी वाणी के मर्मज्ञ माने गये थे। भक्तमालकार राघोदासजी के विवेचन से दोनों गुरु भाइयो का शिष्यत्व व योग्यता की स्थिति स्पष्ट समझ में आ जाती है। छीतरजी का नामोल्लेख सम्पूर्ण शिष्यों के साथ किया गया है जैसा कि इस पद्य से प्रतीत होता है।

छप्पय—दीरघ गोविन्ददास, पाटि अंबरावर राजै।
खेम सरस सरवाङ, तास सिष तहाँ विराजै॥

ॐ

हरीदास छीतर जगन, दामोदर केशो ।
कल्याण द्वै बनवारी, राम रत गहिमत वेसो ॥
जन राघो मंगल रात दिन, दासे दे दे कार अन्न ।
इमि रज्जब अज्जब महन्त के, भले पिछो पे साध सब ॥ १ ॥

उपरोक्त पद्य में रज्जबजी के प्रमुख शिष्यों के सब के नाम दे दिये गये हैं इन्हीं में छीतरजी का व खेमजी का नाम आया है। खेमदासजी सरवाड में स्वतन्त्र रूप से रहते थे।

भक्तमालाकार ने खेमदासजी का विशेष परिचय भी दिया है। जैसा कि इस 'मनहर' कवित्त से ज्ञात होता है—

महन्त रज्जब के अज्जब शिष्य खेमदास,
जाके नेम नित प्रति व्रत निराकार को।
पथमें प्रसिद्ध अति देखिये दैदीप्यमान,
वाणी को विनाणी अति माफिन में भार को ॥
रामत मेवाड में मेवासी मुख सोहे बात,
बोलत खरो सुहात वेतवा विचार को।
राघो सारो रहणी को कहणी सुकृत अति,
चेतन चतुर मति भेदी सुखसार को ॥

यह पद्य आभास कराता है कि खेमदासजी निराकार के दृढ़ उपासक, अत्यन्त शील सम्पन्न, वाणी के विशेषज्ञ व रहणी कथणी में एक रूप थे। रभा शुक सम्वाद के आरम्भ में इनने रज्जब जी महाराज के गुरु

होने का स्वयं भी उल्लेख किया है जैसा कि उसके पहिले दोहे में कहा गया है।

आरंभकी—

चौ०—निराकार परणाम करीजै, रसना त्रिम्न लगाय गुनीजै।
गुरु रज्जब दादू परम देवा, नाम कबीर करे हरि सेवा॥

अन्तिम चौपाई—

जब गुरु कृपा भई पट भागे, बहु गुण कथा चतुर दिन लागे।
कथा विमल अनुमान जु करनी, यथा जुगति सू "खेम" जु बरनी।

खेमदास जी की तरह छीतरजी ने भी गुरु रज्जब जी महाराज के बारे में स्वय उल्लेख किया होगा पर वह प्रमाण उन रचनाओं में ही मिलेगा जो छीतरजी की अवशिष्ट है।

वाजिन्द जी—

पचामृत में पाचवीं रचना वाजिन्द जी की 'अरील' है। वाजिन्द जी दादू जी महाराज के एकसौ बावन शिष्यों में थे। उनके लिये आख्यान है कि वे तीर से किसी हिरणी का शिकार कर रहे थे, शिकार करने के पश्चात् या तीर चलाने से पहिले उनके हृदय में करुणा का उद्रेक उत्पन्न हुआ। उस एक ही परिवर्त्तित विचार धाराने उनके जीवन की कायापलट कर दी। उन्होंने वहीं तीर कवाण तोड़ कर फेंक दिया, घरलौटे बिना सतगुरु की तलाश में चल पड़े। दादू जी महाराज से उपदेश ग्रहण कर साधना में लग गये। वे जाति से पठान तथा मजहबसे मुसलमान थे। पर

दादू जी का शिष्यत्व स्वीकार करने के पश्चात् उनने जाति धर्म के पक्ष का सर्वथा परित्याग कर दिया।

इस तृतीय पुष्प में केवल उनकी एकसौ पैंतीस अरिल ही दी गई हैं। इनकी यह रचना विषय विशेष पर नहीं है। सामान्यतः व्यावहारिक जीवन को ऊंचा उठाने के लिये जिस उपदेश व शिक्षा की आवश्यकता होती है उन्हीं का दिग्दर्शन 'अंग' रूप विभिन्न प्रकरणों में किया गया है।

वाजिन्दजी की और भी रचनायें प्राप्य हैं। उपलब्ध रचना छोटे२ चौदह ग्रंथों में है, परम्परा से सुनने में आता है कि इनकी पूरी वाणी है। इन ग्रंथों से इसकी पुष्टि भी होती है। जगन्नाथजी के गुण गंजनामें तथा रज्जब जी के "सर्वंगी" नामक संग्रह में वाजिन्दजी की साखियें उद्धृत हैं, इससे सिद्ध होता है कि इनकी रचना "वाणी" रूप में अवश्य थी। ये छोटे ग्रन्थ उसके अवयव हैं। इनके ग्रन्थों के नाम भी विशेष रूप के हैं जैसे १ ग्रंथ गुण उत्पत्ति नाम, २-ग्रन्थ गरजनामा, ३ ग्रथ प्रेमनामा, ४ ग्रंथ गुणनाममाला आदि। इनके ये ग्रंथ प्रायः दोहे चौपाई छन्दों में हैं। ये जाती से मुसलमान थे फिर भी इनकी रचना में हिन्दी भाषा का प्रयोग बहुत विशुद्ध रूप में हुआ है। भाषा सरस, सरल तथा सुबोध है। शब्द योजना भी व्यवस्थित है। भाषा का प्रवाह "अरिलों" में तो आप देखेंगे ही। उनकी और रचना के नमूने भी देखिये।

दोहा—सतगुरु के वन्दों चरन, करन मुक्ति जग जीव।
जो जन बिसरे एक पल, पुनि सुमरावै पीव॥ १॥

चौपाई—तो तरुण भयो चित उपज्यो चेत, युवती सेती कीनो हेत ।
प्राण तज्यो पर होई न जूवा, नलनी मानहुँ बन्ध्यो सूवा ॥
ज्यूँ ज्यूँ तन तरुणा यो चढे, त्यूँ त्यूँ काम कल्पना बढै ।
वदन विलोकत तृप्ति न होई, इहिं विधि पुरुष भयो वश जोई ।

ये उदाहरण भाषा के विषय में सिद्ध करते हैं कि इनमें मुसलमानीपन का कहीं लवलेश भी नहीं है । मेरा विचार है कि यदि इनकी समग्र रचना प्राप्त होगई तो उसका स्वतन्त्र प्रकाशन किया जाय ।

वाजिन्दजी अपने विचार परिवर्तन से ही विरक्त हुये थे अतः इनकी साधना में तीव्रता होना स्वाभाविक था । करुणा का स्रोत ही इन्हें साधना की ओर ले गया था अत. साधना के पश्चात् तथा साधना काल में ये परम दयालु-वृत्ति वाले रहे ।

उनकी लगन साधना तथा मनोदशा का महत्व भक्तमालाकार राघोजी के निम्न पद्य में देखिये—

मनहर—छाडि के पठाण कुल रामनाम कीन्हों पाठ,
भजन प्रताप सू वाजिन्द बाजी जीत्यो है ।
हिरणी हतत उर डर भयो भयकरि,
सील भाव उपज्यो दुसील भाव बीत्यो है ।
तोरे हैं कबाण तीर चाणक दियो शरीर,
दादूजी दयाल गुरु अंतर उदीत्यो है ।
राघोरति रात दिन देह दिल मालिक सूँ,
खालिक सूँ खेल्यो जैसे खेलण की रीत्यो है ।

वाजिन्दजी दादूजी महाराज के शिष्य थे यह ऊपर के उद्धरण से तो स्पष्ट है ही, वाजिन्दजी का स्वकीय प्रमाण भी इसका द्योतक विद्यमान है। वे अपने ग्रंथ गुणनाममाला में निर्देश करते हैं—

चौ०—सौझा पीया सुमरे सही, जिनके दुविधा नेकन रहीं।
चरन कवल चित वत, ले धरिया, सुमरै कृष्णदास कठ हरिया॥
जाति वर्ण कुल छाडि रीति, सुमरहिं सधना पर परीति।
सन्त सन्तोषी सेवग आदू, प्रति व्रतसो सुमरे गुरु दादू॥ १॥

पँचामृत रूपी यह तृतीय पुष्प मै समझता हूँ कि इन भिन्न २ साधकों की अनुभूति मय उपदेश रूप सुरभि से आपको आह्लादित करेगा। पँचामृत के अन्त में विभिन्न महात्माओं की आरतियें दी गई हैं। ये आरतियें उन साधकों की हैं जिनने अपने में ही परमपिता परमेश्वर की प्राप्ति की।

आज के युग में परमेश्वर की सत्ता को सभी स्वीकार करें यह संभव नहीं पर इन उपासकों के उदात्त जीवन की धारा का महत्व तो सभी को स्वीकार करना होगा। इनने अपने जीवन के धरातल को मै तूं तथा जाति वर्ण धर्म के बन्धनों से रहित कर दिया था। जीवन का यह रूप ही संसार मे स्तुत्य माना गया है व माना जायगा। उनकी आरतियें हमें तदर्थ ही सचेष्ट करने का काम करती हैं। वे बाहरी घंटा, घड़ियाल, दीपक, धूप, भोग राग के दिखावे का निषेध करते हैं वे उस आरती का निर्देश करते हैं जिससे भेद भाव का आभास रहने न पावे।

आरती संग्रह के अन्त मे कुछ चुनी हुई साखियें दी गई हैं ये भी

महत्त्व पूर्ण सुभाषित वचनावली हैं। आशा है हम इस मानसिक आहार द्वारा अपने मन का इनमें लिखित भावों से पोषण करने में समर्थ होंगे।

फा० कृ० १३ स २००४। सोमवार
दादू महाविद्यालय, जयपुर।

मंगलदास स्वामी

अनुक्रमणिका

क्रमाङ्क विषय	पृष्ठाङ्क

क्रमाङ्क विषय	पृष्ठाङ्क

श्रीदादूदयालवेनमः

पंचामृत

अथ भीषजनजी की बावनी

कवित्त—

ओंकार अपार आदि अनादि जगत गुर ।
अन्त आनन्द सुषकन्द दुंद[1] दुषहरन सेव सुर ॥
सकल रंग सरबंग[2] अंग अनंग[3] अमित अति ।
दीनबंधु सुषसिंधु गंधकर परम विमल मति ॥
भुवि[4] नायक नायक त्रिपुर[5] श्रुधि दायक वरनन करन ।
वन्दत भीष जन जग वन्दत नमो देव असरन सुरन ॥ १ ॥
नमो परम गुरु चरन सरन तिह करन बुद्धिवर ।
अति प्रवीन लीन गुन दीन पर परम दयाकर ॥
गति गुनज्ञ बुद्धिप्रज्ञ अज्ञमति कहा बषान ।
दधि[6] अथाह को थाह अतिर[7] पावै को जान ॥
वे अनुपम गमि अगमि कहि उपम उपजै कृपा ।
कुछक बषानत भीषजन संतदास सतगुरु कृपा ॥ २ ॥
मम मति कुछ विचार संतमति हार हरन चित ।

---

१ दुंद = द्वन्द्व, कामादि । २ सरबंग अंग = सब का मूल । ३ अनंग = अमूल । ४ भुवि = संसार । ५ त्रिपुर = स्वर्ग । ६ दधि = उदधि, संसारसमुद्र । ७ अतिर = नहीं तरनेवाला ।

लहै हीरकन हेमै गहै को लोह जान वित ॥
पी पियूर्ष रस हेत ऊखरस कौन मुख लेत कौन मुख ।
गंगाजल औगाहि कूपजल कौन चाहि चुष ॥
लघु दीरघ निर्गुन गुनहि मति उनमान बुधि बहू ।
तिन प्रसाद भनि भीषजन कहूं कछू आज्ञा लई ॥ ३ ॥
सिंघनि पै क्षुर्न जात सबल तीछन अनरंजन ॥
जुगनि बिना नहिं रहत रहत कंचन को भंजन ॥
उडत आहि कपूर चपल सूक्ष्म अनसंगम ॥
रहत नाहिं बहु भांति मिरच संपट बिन संगम ॥
ज्यू ही राही री अनंत नैक मांहि चलि जात है ।
काचे भंजन भीषजन ज्ञान नाहि ठहरात है ॥ ४ ॥
ध्रुव प्रह्लाद मुनिंद व्यास सुषदेव सु नारद ।
शंकर शिव सनकादि हुए प्रीक्षत गुन सारद ॥
ऋषभदेव जैदेव जनक नपै चतुरानन ।
गोरषदत्त बषान नित नेति निगम पुरानन ॥
नाम कबीर अंत जन, दादू भाख्यौ अगम अति ।
पारन पावत भीषजन सबन कह्यौ अनुमान मति ॥ ५ ॥

---

१ हीरकन = हीरकांनग । २ हेम = सुवर्ण, सोना । ३ वित = धन । ४ पियूष = अमृत । ५ ऊषरस = गन्ने का रस । ६ औगाह = अवगाहन कर । ७ सिंघनि पै = सिंहनी का दूध । ८ भजन = भाजन, बर्तन । ६ चपल = अस्थिर । १० अनत = बिना । ११ मुनिंद=मुनींद्र ।

अ—अजा कण्ठ थन दुह्यौ चह्यौ तब दूध नांहि पल ।
मृग मरीच कैं दिसि धयां[1] गयो तब नांहि नैंक[2] जल ॥
सुष सैंबर कर गह्यौ लह्यौ तब तूल अनागत ।
सुपने सम्पति सुष चुष नांहि न कुछ जागत ॥
धूरि ध्यान जनभीष करि नट दरिद्र अति विधि जिसी ।
अन्त काल निरफल सकल आंन देव सेवा इसी ॥ ६ ॥

आ—आहि पुहुप जिमि वास प्रगट तिमि बसै निरन्तर ।
ज्यों तिलथिन में तेल मेल यों नांहिन अन्तर ॥
ज्यूं पय घृत सञ्जोग सकल यौं है सम्पूरन ॥
काष्ठ अगनि प्रसंग प्रगट कीये कहूं दूरन ॥
ज्यूं दर्पण प्रतिबिम्ब मैं होत जाहि विश्राम है ।
सकल बियापी भीषजन असे घटि घटि राम है ॥ ७ ॥

इ—इक सरवर तजि मीन ञीन[3] कैसे सुष पावत ।
वायस[4] बोहिथ[5] छाडि फिरत फिर तासुहि आवत ॥
सबै भीति[6] की दौर ठौर बिन कहां समावत ॥
उडै पंष बिन आहि सु तौ धरती फिर आवत ।
पात सींचियत पेड बिन पोष नांहि द्रुम ताहिको ।
असे हरि बिन भीषजन भजै सु दूजा काहिको ॥ ८ ॥

---

१ धयो = भगा, दौड़ा । २ नेक = थोड़ासा । ३ छीन = क्षीण ।
४ वायस = काग । ५ बोहिथ = जहाज । ६ भीति = भय ।

ई—ईश मोहिनी रूप सुता ब्रह्मा तप छीनौं ।
फंध्यौ[1] इन्दु[2] गुरु बामै[3] इन्द्र पुनि इहि रस भीनौं ।
श्रृंगी ऋषि वन मांहि पेषि पारासुर मोहे ।
है कीचक घमसान जांन देवल महि सोहे ॥
रावण पर त्रिय हेत लगि, दीये सीस दश वाम रस ।
सुरनर असुर सु भीषजन, को को भयेन काम वसि ॥ ६ ॥
उ—ऊकि[4] सिंह परि कूप पेषि प्रतिबिम्ब रूप प्रति ।
काच भुवन मधि श्वान मरयौ भ्रम भूकि ताहि गति ।
फटक शभ गज चाहि[5] वादिही[6] दृशन[7] छेदि कीये ।
मर्कट मूठी स्वाद साथ पर हाथ प्रान दीये ॥
ज्यूं जनभीष विवेक बिन शुक नलिनी बंधन करयो ।
यूं अज्ञान मति आपतैं अपस[8] प्रान बंधन परयो ॥ १० ॥
ऊ—उडियनपति[9] कदि कह्यौ सहज इंन्दीवर[10] फूल्यो ।
पहुप[11] वास अनयास आनि मधुकर[12] भ्रम भूल्यौ ॥
पारस भाष्यौ काहि[13] मोहि परसत है कंचन ।
चन्दन कब गुन कथ्यौ तपति तन रह्यौ न रञ्जन ॥

---

१ फध्यो = फस्यो, उलझा । २ इन्दु = चन्द्रमा । ३ वाम = स्त्री, पत्नी । ४ ऊकि = चूक कर । ५ चाहि = देख । ६ वादही = व्यर्थ । ७ दशन = दांत । ८ अपस = विवश । ९ उडियनपति = चन्द्रमा । १० इन्दीवर = कमल । ११ पुहप = पुष्प । १२ मधुकर = भैंवरा । १३ काहि = किसको ।

रतन अमोलिक सब कहै अप मुख कहा वषानिये ।
ऐसे जन प्रति भीषजन गुन आपे ही जानिये ॥ ११ ॥

छ्र ॥ रूष हार फूल लग्यौ पोष ता अन्तर पावत ।
परै टूट जल पेषि गिर पुनि काम न आवत ॥
नदी तीर प्रवाह मिल्यौ सागर कों परसै ।
आतुर ह्वै जल छुटो बहै फिर बूंदन हरसै ॥
तजि नौका जनभीषजी, छूटत पारन पाइ है ।
तैसे गुरु तजि हरि भजै निश्चय निरफल जाइ है ॥ १२ ॥

छ्र ॥ रीति अनूपम येहै पुहमि पुरवै अनइछक ।
नाहि उराहन काहि सेव अनसेव अवंछक ॥
षग मृग पसु पतंग सकल पुरवे सुष सागर ॥
काहे कों पचि मरत लिख्यौ सो मिटवन कागर ॥
विरद लाज पोषै सकल गह्यो जानि भजन भरै ॥
सो क्यूं विसरत भीषजन अनचिन्तत चिन्ता करे ॥ १३ ॥

ल—लिये तासु गुन गयो दूध कांजी के परसै ॥
मिलै सुरसरी सिंधु भयो जल षार समुन्दर सै ।

---

१ रूष=वृक्ष । २ पोष=खुराक,पोषण । ३ पुहमि=भूमि,पृथ्वी । ४ उराहन=दोष,उपालंभ । ५ पुरवे=भरे,पोषण-करे । ६ गह्यो=अपना बनाया हुवा । ७ तासु=उसका । ८ सुरसरी=गंगा ।

मृगमद[1] कै ढिग[2] ल्हसुन सुतौ ताको गुन पायौ।
दयौ सर्प पै[3] पान मधुर तैं है विष वायौ।
कोयला तऊ कारो करे जो ऊजल अति धोइये।
तऊ सुसंगति भीषजन संग कुसंग न होइये॥ १४॥

६—लिये नीम सतसंग भयौ मलियौ[4] ढिग चन्दन।
लोहा पारस परस सरस दरसन है कुन्दन[5]।
मिलैं सुरसरीनीर सीर निश्चै सो गंगा।
मिश्री सों मिलि तुल्यौ वेस ताहीं के संगा॥
लोह तिरयौ नौका मिले साषि सकल सुधि लीजिये।
बदत भीषजन जगत में जानि सुसंगति कीजिये॥ १५॥

८—एक बूंद आकास जास कदली[6] कपूर भये।
एक बूंद मुषव्याल[7] भई ज्वाला प्रगट गये॥
एक बूंद मधि सीप दीप है प्रगटे मोती॥
एक बूंद गृह नीच भयौ उत्तम जल छोती[8]॥
एक बूंद मिलि सिंध में गन्ध रूप गुर है गई॥
यूं जिहि संगति भीषजन मिल्यौ सु उहै प्रकृति भई॥ १६॥

---

१ मृगमद = कस्तूरी। २ ढिग = समीप। ३ पै = पय, दूध।
४ मलियौ = मलयागिरिचन्दन। ५ कुन्दन = सोना। ६ कदली=केला।
७ व्याल=सर्प। ८ छोती=छूतवाला, अस्पृश्य।

ऐ—अयुत लाष करोरि जोरि जो अर्वहि षर्वहि ।
पद्म शंख अन शंष संची[1] जौ करै द्रर्वहि[2] ।
तृष्णा लहत न तोष पोष जियत उस ऊनौ[3] ।
जरै अगनि ज्यों काठ एक सन्तोष विहूनौं[4] ।
नदी सिंध सोषै[5] सकल ऋतु पावस छीनौं[6] रहत ।
त्यूं तृष्ना लगि भीषजन तृपति न कबहूं ना लहत ॥ १७ ॥

ओ—ओस नीर ज्यूं जानि जगत सुपिने की संपति ।
सीतकोट[7] समतुल्य धूम गृह ज्यूं सुष दंपति ।
बालक कैसो खेल जिसौ ठहरावत औरा ।
रेत भींति ज्यूं चाहि आहि अंजुरी जलथोरा ।
सब नौका संयोग सम छिन[8] विछोह[9] ह्वै ज़ात है ।
चेतन नांहि न भीषजन फिर पीछे पछितात है ॥ १८ ॥

औ—औषद मोल अपार भेद बिन छारहि[10] तूलत[11] ।
हीरा देत अजान[12] लेत कौडी अति फूलत[13] ।

---

१ संचि=सञ्चय कर, इकट्ठा कर । २ द्रबहि=सम्पत्ति । ३ ऊनौ= खाली. । ४ बिहूंनो=बिना । ५ सोखे=सुखावे । ६ छीनो=क्षीण, बिना मरे । ७ सीतकोट=हिमर का मकान । ८ छिन=क्षणमें, पलमें । ९ बिछोह=वियोग । १० छारहि=राख बराबर । ११ तूलत=तुलना करे, समान समझे । १२ अजान=बे जाने । १३ फूलत=प्रसन्न होवे ।

चिंतामनि कर अध असम के धरी पटंतर ।
हंस कहै बग आहिं मूढमति केती अन्तर ।
पारसं लै अहंडा कियौ चन्दन फकत काठ सम ।
बिन पारषजन भीषजन कैसै जानत तासं गर्म ॥ १६ ॥

अं—अनंग तपति अति दहै अंगनि सीतल करि कारौ ॥
सन चांटे करि प्रीति श्वान कांटै रिसं न्यारौ ।
तू तौ सरवस लेत देव रूठौ दुख दे है ।
सर्प छछून्दर गहत कुष्ठ तन हानि जु सहै ।
दोऊ भानि न होत सुष नीच न भूलि पतीजिये ।
रिसं रसं कैसी भीषजन ताहि न कबहूं धीजिये ॥ २० ॥

अ:—अति सुपनै सुख लह्यो जग्यो तब नांहि पैकं छिन ।
मिल्यौ आइनौ रोज चोज कं औहि पैचे दिनें ।
बाजी चिहरजु आहि चाहि बिछुरे बहु थानी ।
नौका वारि संजोग पारि द्रुमं चिरी उडानी ।
चेतत नांहिन भीषजन जो आयो सो जाहि है ।
राति बसै दिन उठिचले इहे संसार सराय है ॥ २१ ॥

---

१ असम = पत्थर के । २ पटतर = समान । ३ अहडा = बाट, वर्तन का तोल । ४ गम = भेद । ५ अनंग = कामदेव । ६ तपति = सताप । ७ रिस = क्रोध । ८ सह = सहन करता । ९ रिस = गुस्सा । १० रस = प्रीति, प्रेम । ११ धीजिये = विश्वास करिये । १२ द्रुम = पेड़ ।

क—कहां कैरौं[1] बलिवन्त कहां लंकेश शीश दस ।
कहां अर्जुन कहां भीम कहां दानव हिरनाकुस ।
कहां चक्रवै मंडलीक कहां सांवत सेनावर ।
कहां विक्रम कहां भोज कहां वलि त्रेगा करण कर ।
उग्रसेन कलि कंस कहां ज्वाला मैं जन सब जले ।
वदत भीषजन पंथ इह[2] को को आइन को चले ॥ २२ ॥

ष—षर चन्दन जस भार सार कुछ मध्यन जानत ।
कूटा[3] कठिन शरीर मधि घृत जाहि बषानत ।
दरवी पाक संजोग नेक रस स्वाद न पागे ।
चिंतामणि कर अंध डारि कंकर करि भागे ।
दादुर निकट न जानि है कँवल कोस पानी चढी ।
तत्व न जानत भीषजन कहा भयौ विद्या पढी ॥ २३ ॥

ग—गनिकों[4] सिषवत सील[5] कृपन[6] दिढ़वै[7] अति दानहि ।
बधिकं[8] दया ऊचरे[9] मूढ व्है ज्ञान वषानहि ॥
कामी इन्द्रीदमन[10] जुधकों[11] जपै सु कायर[12] ।
अंध बतावत पंथ अतिर तिरवे को सायर ॥

---

१ केरौं = कौरव । २ पथ इह = इस रास्ते । ३ कूटा = चमड़े का बर्तन । ४ गनिका = वेश्या । ५ सील = चरित्र । ६ कृपन = कंजूस । ७ दिढवै = समर्थन करे । ८ वधिक = हिंसक । ९ ऊचरे = कहे । १० इन्द्रीदमन = इन्द्रियों को रोकना । ११ जुध = संग्राम । १२ कायर = डरपोक ।

आपन बहु बंधन पर्‌यौ औरन मुकति वषानिये।
ये सब झूंठी भीषजन सांच कवन विधि मानिये ॥ २४ ॥

घ—घरि घरि नाहिं न कलपवृत्त द्रुम आनि जगत बहु।
पारस कहूंक आहि सैल पाषान अमित बहु ॥
चिन्तामणि कहु साच काच सरै जग माहीं।
हंस होत सरमान बगे छीलर अवगाही ॥
सकल समन्द्र हीरा नहीं संप बहुत बिन ज्योति है।
त्यूं साधूजन भीष भनि निहचै कवहूंक होत है ॥ २५ ॥

न—नाहिं न पारस परस रह्यो जो लोह निरन्तर ॥
चन्दन भयो न संग नींम पलस्यो नहिं अन्तर ॥
चिन्तामणि नहीं लही अजौं चिता जो ऐहै।
मिल्यो कलपतरु नाहिं जीव कलपनां न जैहै ॥
काम धेनु पाई नहीं रही कामना जीवभ्रम।
सतगुरु मिल्यौ न भीषजन ज्ञानन पायौ मूढगम ॥ २६ ॥

च—चन्दन ढिगैं जु बंस ऊंच कुल भयो न मलिया।
पाहैन कठिन जु हीय मधि सु भिंधौ न जलिया ॥
पारस कों कहा दोस लोह बिच रह्यो जु अन्तर ॥
बूंटी षात न मूढ वैद का करे धनन्तर ॥

---

१ आनि = और, दूसरे। २ बग = बगुला। ३ छीलर = थोड़ा पानी। ४ पाहन = पत्थर। ५ भिधो = बेधित हुवा।

छिद्र कुम्भ जल ना रहे जो वरिखा वहु कीजिये।
सिख मूढ मति भीपजन तौ गुरु दोष न दीजिये॥ २७॥

छ—छेदन मलिया आहि कियो सीतल सु ताहि तन।
पीड़त ईख अनेक श्रवत सो मधुर जानि कन॥
वह कंचन अति कसे लसै वहि निरमल पानी।
अगर अग्नि तन दाह ताहि फिर परमल[1] ठानी[2]॥
द्रुम दिसि ढेलौ डारि है वह फल देत अनन्तई।
दुष्ट दुष्टमति भीषजन सन्तन छाडै सन्तई॥ २८।

ज—जरत[3] दवाग्नि[4] मूस[5] हंस लैचल्यो मानसर।
उनि कीनौ फिरि पंप छेद सो पर्‍यौ धरनि पर।
पथिक वृक्ष विश्राम वहुत फल फूल संतोष्यौ।
उनि कीनौ फिर नास कंद तिहि मूल रुंदोष्यौ।
अहि पयपान सु भीषजन विप अमृत करि सानिहै[6]।
जो निगुन हि गुन कीजिये तौ सु औगुन मानि है॥ २९।

झ—झूठ साच सम कहां कहां पाहन कहां पारस।
कहां लोह कहां हेम[7] कहां विप अमी[8] महारस॥
कहां दिवस कहां रैन कहां तारा कहां सूरज।
कहां धरनि कहां व्योम[9] कहां सर[10] सिंधु[11] सपूरज[12]॥

---

१ परमल = सुगन्ध। २ ठानी = शुरू की। ३ जरत=जलतेहुये। ४ दवाग्नि=हिमपातसे। ५ मूस=चूहा। ६ सानिहै=मिलातेहै। ७ हेम सोना। ८ अमी=अमृत। ९ व्योम=आकाश। १० सर = तालाव। ११ सिन्धु=समुद्र। १२ सपूरज = वेगसहित।

चिंतामणि धंकर कहां सुनि यह सकल पटंतरा[1] ।
पेष[3] परष्यौ भीषजन स्वांग साध यहु अन्तरा ॥ ३० ॥

न—निरषि काम अति हेत भयो लंकापति षण्डन[2] ॥
क्रोध काजि बलि साज कीन्ह हिरनाक्ष विहण्डन ॥
लोभ लागि बलि राइ धाइ करि गयो पयालहि[4] ।
मोह कपोत सनेह कुटम्ब हित परयो सु जालहि ॥
काम क्रोध अरु लोभ लगि मोह सहित चार्यूं गंता[5] ।
ये सबि व्यापत भीषजन सो कैसे नहीं ह्वै हंता[6] ॥ ३१ ॥

ट—टेक[7] काज शिवकंठ अजौं विष नाहि न त्यागत ॥
टरी न अजहूं टेक सिंध बडवानल जागत ।
अजौं शेष सिर भार नांहि डारत गति ऐसी ।
चुगै अंगार चकोर टेक तिन तर्जीन तैसी ।
तरुनि[8] तपति[9] लीये रहै सो व्रत नैंक न खंडियै[10] ।
जानि भीषजन साच की गही टेक क्यों छंडिये ॥ ३२ ॥

ठ—ठग्यौ जु वीसल जोरि[11] कोरि[12] वीसकै[13] जिहि संची[14] ।
ठग्यौ जु नन्द नरेस रहीं जल मांहि न वंची[15] ॥

१ पटंतरा = समता । ३ पेष = वेख । २ षण्डन = नाश । ४ पयालहि = पाताल । ५ चार्यूंगता = चारोंगये,नष्टहुये । ६ हंता = विनष्ट। ७ टेक = आग्रह ,प्रतिज्ञा । ८ तरुनि = सूर्य । ९ तपति = गर्मी,उष्मा । १० खंडिये = तोडिये । ११ जोरि = जोडजोड । १२ कोरि = करोड । १३ वीसक = वीस । १४ संची = इकट्ठी की । १५ वंची = सुरक्षित रही ।

ठग्यौ नृपति वलि वेनि सके ओसर[1] नहि जगी[2] ।
ठग्यौ भोज करि चोज सोज[3] व हरि हेत न लगी ।
निपट[4] कपट कुल छाडि करि ठगैन काहू की संगी[5] ।
जगत विसासन भीषजन सो माया संतन ठगी ॥ ३३ ॥

ड—डगमग डोलत भूर[6] सूर को लियौ जु धानिक[7] ।
पंचायुध[8] गहे भगे लगे लछिन[9] जग जानिक ।
पहर सतीकौ साज उलटि मरहट[10] तें भज्जे[11] ।
सोभन पावत सोइ डिगे[12] दोऊँ कुल लज्जे ॥
स्वांग सती कौ साजि[13] कै फिरै लजावत गोतहै ।
तैसे कीये सु भीषजन जगत विडम्बन[14] होतहै ॥ ३४ ॥

ढ—ढिग[15] ढिग ढूंढ्यौ प्रान आन नहि चढ्यौ पटंतर ।
कस्तूरी मृगनाभि जानि ज्यूं लह्यौ सु अन्तर ।
ज्यूं दर्पण मल मांहि नांहि आनन[16] रुचि[17] देष्यौ ।
जव निरमल गुरु कह्यौ तवहि मुष तहां परेष्यौ[18] ।

---

१ ओसर = मोकेपर । २ जगी = सचेतहुये । ३ सोज = सामग्री,वैभव । ४ निपट = विलकुल, कतई । ५ सगी = साथिन । ६ भूर = भूमि । ७ धानिक = भेष,पहनाव । ८ पचायुध = पाँचोंशस्त्र । ९ लछिन = कलंक । १० मरहट = मशान,चितासे । ११ भज्जे = दोंडे । १२ डिगे = हटे,बदले । १३ साजिकै = पहनकर । १४ विडम्बन = विडम्बना,निंदा । १५ ढिगढिग = पासपास । १६ आनन = मुह । १७ रुचि = लगनसे । १८ परेष्यो = प्रत्यक्षकिया ।

अनगत[1] जो जन ज्ञान बिन बहुत भांति भटकत फिर्‌यौ ॥
काय सिंध में भीषजन अब हरि हीरा कर चर्‌यौ ॥ ३५ ॥

ण—निज भावी भरमाय राम बनवास पठायो ।
पंडौं[2] तजि गृह देश विपति परदेश वितायो ।
करम जोग संजोग वहै[3] मरुत[4] बिन पाइन ।
बहुधा चलै अनंत पेषि[5] ससि[6] सूर[7] तराइन[8] ॥
रांवन गृह कोटौं द्लै बिंह[9] बैठी दुःख क्यो भरै ॥
लिख्यौ सु मस्तक भीषजन भावी कबहुं ना टरै ॥ ३६ ॥

त—तिंन[10] तैं करै सुमेर मेरु तैं करै सु तिनकर ।
दिनकर तैं शशि करै करै शशि तैं पुनि दिनकर
सरवर[11] तैं थैल[12] करै करै थल तैं सो सरवर ॥
तरवर[13] करै जु तूल[14] तूल तैं करै जु तरवर ।
कुंजर तैं चींटी करै चींटी कुंजर चाहवी ॥
लषी जात नहिं भीषजन ऐसी समरथ साहिबी[15] ॥ ३७ ॥

थ—थके चरण कर सीस तरुनपन[16] पेषि परानौ[17] ।
भई अंग गति भंग जरा[18] दल आंनि जुरानौं[19] ॥

---

१ अनगत = बिना जाने । २ पडौ = पाडव । ३ वहै = चले । ४ मरुत = हवा । ५ पेषि = देख । ६ शशि = चन्द्रमा । ७ सूर = सूर्य । ८ तराइन = तारे । ९ बिह = विधवा । १० तिन = तृण । ११ सरवर = सरोवर, तालाब । १२ थल=जमीन । १३ तरवर=वृक्ष । १४ तूल = तृण । १५ साहबी=मालकी, स्वामीपन । १६ तरुणायन = जवानी । १७ परानौं = भग गया । १८ जरादल = बुढापेके हेतुसमूह । १९ जुरानौ = इकट्ठा हुवा ।

पलटि भये सिर सेत हेत कीनौं सुख संपति ।
कंप्यौ सकल शरीर वैन मुख अट पट जंपति[1] ।
नैंकन बूझत बात को स्वान जुगति चितवत रहै ॥
तऊ न लजमति[2] भीषजन अजौं न रसना हरि कहै ॥ ३८ ॥

द—दग्ध वृक्ष नहिं नवै नवै[3] सु आहि सु फलतर ।
नाहिं कसोटी काच साच कै सहै हेमवर[4] ॥
विद्रुम पातन चोट घात सो हीर चोट अति ।
पाहन भिंदै[5] न नीर भिंदै सैंधव कोमल मति ॥
अल्प[6] कुम्भ बोले अधिक संपूरन बोले नहीं ।
त्यूं सठसंग सु भीषजन साध सिद्ध मति है वही ॥ ३९ ॥

ध—धूरि सूर दिस करी परी फिर तास शीस पर ।
वह निर्मल कौ निर्मल मलिन सो मलिन मूढ नर ॥
दर्पन सौं करि कूटि कुटिल ताके मुख सोहै ।
वह सुन्दर अति क्रान्ति वक्त्र वाकौ जग जोहै ॥
गारि देत कौऊ कूप कौं उलटि ताहि पुनि लागि है ।
निन्दक निंदत भीषजन साध सदा सुख पागि[7] है ॥ ४० ॥

न—नाद[8] स्वाद तन बादत ज्यौं मृग है मन मोहित ।
पर्‌यो जाल जलमीन[9] लीन रसनां सो मोहित ॥

---

१ जपति = कहताहै, बोलताहै । २ लजमति = लज्जितहोताहै । ३ नवे = झुके । ४ हेमवर = श्रेष्ठ सोना । ५ भिंदै = भीतरजाय । ६ अल्पकुम्भ = आधा भराहुवा घट । ७ पागिहै = भीगेरहतेहै । ८ नाद-स्वाद = शब्दस्वादसे । ९ मीन = मछली ।

भृंग[1] नासिका घ्रास केतकी फंटक छीनों[2] ।
दीपक ज्योति पतंग रूप रस नैनन लीनो[3] ॥
एक व्याधि गज काम वसि[4] परयौ षाडै[5] सिर कूटि है ।
पंच व्याधि वसि भीषजन सो कैसे करि छूटि है ॥ ४१ ॥

प—परै सिंध में बीज सुतौ[6] कहि कहा जरावत ।
भू प्रहार करि खेदै[7] वृथा छेदक[8] दुख पावत ॥
जल काट्यौ नहिं कटै तवै बहुर्यो[9] मिलि जाई ।
ज्यूं घ जरावत[10] हेम[11] होत बानी[12] अधिकाई ॥
घाढ[13] सहत जनभीष द्रुम नेक नाहिं कसकात[14] है ।
सबद कसौटी जन सहै दूजै सही न जात है ॥ ४२ ॥

फ—फटक[15] रंग मन[16] आहि चाहि तिहि रंग मिलै अति ।
जल प्रवाह कौं चहै ढरनि[17] दिसि वहै ताहि गति ॥
हीरन झांई[18] आन आन सब बान आप मिलि ।
सैन सिषी सब लेखि पेषि जो ये मुदाद सिलि ॥

---

१ भृंग = भँवरा । २ छीनों = वेधितहुवा । ३ लीनौ = जलमरा । ४ वसि = अधीन । ५ खाड = गड्ढा । ६ सुतौ = वह । ७ खेद = कष्ट । ८ छेदक = काटनेवाला । ९ बहुरयो = पुन ,फिर । १० जरावत = तपाया जाय । ११ हेम = सुवर्ण । १२ वाणी = आवाज । १३ घाढ = करोत । १४ कसकात = उफ करता । १५ फटक = स्फटिक । १६ मन = मणिया । १७ ढरनि = ढलाव । १८ झाई = परछाई ।

कस्तूरी मृगनाभि कीट[1] पाट[2] हि कुल सोहै।
मणि विषधर[3] उरजाति फीम जूठनि जग मोहै ॥
पारसवंस पषान[4] है मंघ हाड सवन[5] कै।
हरि गुन हित वै भीपजन नाहिन कुल कारन चहै ॥४६॥

य—जिमि वाजनि उर छेद तजत कन राय[6] ऋांनस ।
मार्गो मलिंया[7] त्यागि लागि है मेल सु वांनस ॥
गहि चकोर अंगार नाहि मुकता फल लैहै।
काग करंक[8] हि केलि मान करगनि पैहै ॥
चींचर पै[9] असथंन[10] लग्यो पीर अग्त रत हेत है।
औगुन ग्राही भीपजन गुन तजि औगुन लेन है ॥४७॥

रवि आकर पै[11] नीर विमल मल हेत न जानत।
हंस क्षीर[12] निज पान सूपै[13] तजि तुस कन आनत ॥
मधु मापी संग्रहै[14] ताहि नहि कूकस[15] काजै।
बाजीगर मणि लेत नाहि विष हेत विराजै ॥

---

१ कीट = दीमक। २ पाट = लकड़ी। ३ विषधर = सर्प में।
४ पारस वंश पषान = पारस का कुल पत्थर है। ५ सन = अन्न के
वास्ते। ६ ऋानस = तृण। ७ मलिया = चन्दन। ८ करंक = अस्थि-
पंजर। ९ पै = पय, दूध १० असथन = स्तन। ११ आकर = किरण।
१२ क्षीर = सार, क्षीण। १३ सूप = छाज। १४ संग्रह = इकट्ठा करे।
१५ कूकस = स्थूल भाग।

ज्यूं अहीरी काढ़ि घृत तक्र देत है डारिकै ।
यूं गुन ग्रहैसु भीपजन औगुन तजै विचार कै ॥४८॥

छ—लष चौरासी जीणि भूंणि पोषत संतोषत ।
परम पुरुष अनभेव सेव तोषंत रिपुं दोषंत ॥
सुख कारण संपूरण दूर जारन दुख दारन ।
अघ मारन सुख रासि पासिं टारन जन तारन ॥
अन्त अनूप जग रूप जग जगत ज्योति जग सरसवर ।
जग जांमी जन भीप जपि जपि जपि अविहर अमर ॥४९॥

छ—यह अविगति गति अमित अगम अनभेव अषंडित ।
अविहर अपार अनूप अरूचि आरूप अमंडित ॥
निर्मल निंगह निरंग निगम निहसंग निरन्तन ।
निज निरबन्ध निरसंध निधर निरमोह निचिंतन ॥
जग जीवन, जगदीश जपि नारायन रंजंक सकल ।
भुव भारन भव दुख हरन भजु जन भीप अनंत बल ॥५०॥

छ—ससि कलंक छेवि छीन वरण चिन्तामणि पाहन ।
सिंधु पाँर रवि तपन कलर कोंष्ट औगाहन ॥

---

१ ज्यूं = जैसे । २ अहीरी = आहरन । ३ भूंणि = आहार । ४ तोषत = सन्तुष्ट हो । ५ रिपु = शत्रु । ६ दोषत = दुख दे । ७ पासि = फांसी बन्धन । ८ अविहर = नहीं पलटने वाला परम्म । ९ निगह = पकड़ में न आनेवाला । १० रंजक = आनन्ददायी । ११ ससि = चन्द्रमा । १२ छवि = सुन्दरता । १३ पारं = कड़ुवा, खारा । १४ काष्ट = लकड़ी ।

हृदयहीन कुलनास जोनि तन सहस इंदवर[1] ।
प्रजापति मति छाडि लग्यो पुत्री जु कामवर ॥
गंगा ऋषि अचवन करी[2] व्योम[3] शुनि[4] जड़ धरनि करि ।
कामनेन पशु श्रीपजन निहकलंक[5] निज नाम हरि ॥५१॥

य—खिति[6] हित कागर[7] करन करे वनराय[8] सु लेपिन[9] ।
सिंधु घोरि मसि आनि लिखें सारद बहु लेखिन ॥
तऊ न आवत पार हरि सागर उर्यो सूभर[10] ।
थिरी चंच भरि लयौ सकल पीवै को दूभर[11] ॥
पायो न अंत पावै न कोई मुष अनंत कीरति करी ।
थकित भये सब श्रीपजन लहै कौन गति मति हरी ॥५२॥

स—संवत सोलहसै जु बरस जब हुतौ तियासी ।
पौष माह पष सेत[12] हेत दिन पूरणमासी ॥
सुभ नक्षत्र गुन कर्‌यो धर्‌यो अक्षर को आरज ।
कथ्यो श्रीपजन ज्ञात जाति द्विजकुल आचारज ॥
सब सन्तन सौं विनती औगुन मोर निवारियोहु ।
मिलते सौं मिलते रहो अन मिलते अंक[13] सवाँरियहु[14] ॥५३॥

---

१ इन्दवर=कमल । २ अचवनकरी=आचमनकी । ३ व्योम=आकाश । ४ शुनि=शून्य । ५ निहकलंक=दोषरहित । ६ खिति=क्षिति,पृथ्वी । ७ कागर=कागज । ८ वनराय=कदलीवन । ९ सुलेपिन=सुन्दर कलम । १० सूभर=गम्भीर । ११ दूभर=कठिन । १२ सेत = शुक्ल । १३ अंक = अक्षर,शब्द । १४ सँवारियहु = सुधारना ।

६—हरि गुन संकुल सुजस अगम अति उक्ति वषानौं ।
कुछ उपज्यौ जिय आहि कछू मुष सुन्यौ सु आन्यौ ॥
सर्व अंग गुन भेद कथी बावनी विविध परि ॥
सन्तदास सतगुरु प्रसाद भाष्यौ रसनांत करि ॥
परम पांनि जोरे जुगल सु जन भीष बिनती कही ।
जो संतनि मति मानि है तौ परम अत्तर द्वै सही ॥५४॥

॥ इति भीषजनजी की बावनी संपूर्ण ॥

---

१ संकुल = समूह । २ आहि = अपने । ३ पानि = हाथ ।
४ जुगल = दोनों । ५ द्वै = दो, राम ।

अथ बालकरामजी के कवित्त
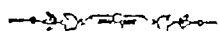
छप्पय छन्द—

कालिह करै सो आजि आजि सो अब ही कीजै।
छिन[1] भंगुर यह देह राम भजि लाहा लीजै ॥
काया कर्म आधीन काल गति जाइन जानी।
अधवींधो[2] ही रहै काम आरंभै प्रानी ॥
अैसी विधि अब जानि जिव सुमिरन सुकृत कीजिये।
कहि बालकराम सतसंग मिलि जन्म सफल करि लीजिये ॥१॥

मनहर—

जैसे बांझ[3] कामिनी सूं पुरुष करत संग,
बालक न होइ जापै वाहीमांझ[4] दोष है ॥
जैसे कोऊ ऊसर में फेरि फेरि बाहै बीज,
निपजै न खेत तौ करसान[5] सूं न रोष है ॥
जैसे नीव नागर कौं बार बार सींचै दूध,
अैसे सठ मूरो ताकौं सबद को पोष है ॥
तैसे एक पेचर कै कारन रहै न ज्ञान,
कहत बालकराम ताकौं नही मोष है ॥२॥

---

१ छिन = क्षण। २ अधवींधो = अधूरा, अपूर्ण। ३ बांझ = सन्तान नहीं होनेवाली स्त्री। ४ वाहीमांझ = उसीमें। ५ करसान = किसान से।

छप्पय—

माला तिलक न आदि वादि पष करैं अज्ञानी,
वर्णाश्रम को धर्म वेद विधि मानें प्रानी ॥
षट दर्शन जग माहि क्रयानेंव पाखंड गाया,
पथ नाना प्रपंच सम्प्रदा भेद बनाया ॥
यहु धर्म अनात्म देह को नुनि ज्ञान ग्रन्थ वेदान्त को,
कहि बालकराम भरमै नहीं राखै एक सिद्धान्त को ॥३॥

माला तिलक न भक्ति भक्ति नहि छापा दीये,
भद्रभेष[1] नहि भक्ति भक्ति छाला तन कीये ॥
भक्ति नहीं षट कर्म भरम भूले अज्ञानी,
भक्ति नहीं आचार ब्यार मृतका बहु पानी ॥
तो भक्ति नहीं कछु नगन तन देषौ भुगंतै[2] कर्म को,
कहि बालकराम पावै नहीं प्रेम बिना परब्रह्म को ॥४॥

महादेव हरि भक्त भक्त लिछमी[3] अरधंगी,
ब्रह्मादिक हरि भक्त भक्त सनकादि अलिगी ॥
मूल संप्रदा चारि चारि आचारज[4] मानै,
और अनन्त अपार भक्त भगवन्त समानै ॥
अब आदि अन्त मधि सन्त सब,

---

१ भद्रभेष = सुन्दरपहनावा । २ भुगंतै = भोगे । ३ लिछमी = लक्ष्मी ।
४ आचारज = आचार्य ।

जुगि जुगि भजन किया सदा ।
कहै बालकराम तिन के किसा भेप पंथ पप संप्रदा ॥५॥

जोगी जंगम आदि प्रथम सापा नहीं इनके ।
संन्यासी औपात कहो शाखा किन किन के ॥
जैन धर्म के जती केस शिर लोच[1] करावैं ।
और किते कलि मांहि बहुत सापानर खावैं ॥
यहु भेप वरन सब देह पर,
आतम अवरन[2] जगपिता ।
कहि बालकराम व्यौहार में,।
बिना ज्ञान भूले किता ॥ ६ ॥

मनहर छन्द—

ईश्वर की सृष्टि सुख दाई सदा, ज्ञान पाइ,
राग द्वेष हर्ष शोक द्वन्द्वनि ते न्यारे है ।
जीव की तो सृष्टि दुष दाई है अनेक भांति,
मेरौ तन मेरौ धन मन मांझ प्यारे हैं ॥
जैसे येक बन विषै रूंष रोकि बाडि[3] करे,
दातुण जो तोरै कोउ कहै मेरे सारे है ॥
कहत बालकराम ममता तैं दुष पावै,
ममता के छाडे जीव मुगति सिधारे हैं ॥ ७ ॥

---

१ लोच = लुञ्चन, उपटवाना । २ अवरन = वर्णहीन । ३ वाडि = वरा ।

जैसे लांबो[1] जेवरा सु वेद विधि कहिये ताहि ।
सुभ अरु असुभ कर्म गल पोर है ॥
जैसे विप्र बणजारे वचन की नाथ पासि,
जीव बैल वपुधारी बंधे इक ठौर है ॥
जैसे गौनि[2] भरि राखी वासना अनेक भांति,
पाप पुनि बीजरूप वर्धमान और है ॥
तैसे वेद जालरूप आश्रम वरन नाम,
निकसे बालकराम संत जग मोर हैं ॥ ८ ॥

छप्पय छन्द—

वेद वृच्छ[3] विस्तार सघन छाया गुण जामें,
अरध उरध मधिलोक वचन अरणक सब तामें।
कर्म उपासना ज्ञान काण्ड तीन्यूं ता मांही,
पत्र पहुप फल लगे भोग ता त्रिविध कहाही ॥
अब कर्म पत्र पशु चरन कों, पुहुप भवर ले वासना,
कहि बालकराम नरज्ञान फल त्रिविध सु भांति उपासना ॥९॥
जैसे बन विस्तार प्रगट यूं जगत पसारा,
पंचों इन्द्री पंच काम कुंजर निरधारा ॥
अंध कूपगृह मांहि जीव पशु परे अज्ञानी,
प्रेरक कर्म प्रधान विंप तृण दृष्टि छिपानी ॥
अरु येक बडो डर अति तहां,

---

१ लांबो = लम्बा । २ गौनि = गूण, बोरा, थैला । ३ वृच्छ = वृक्ष

काल सर्प सब को गिलै।

कहि बालकराम तब ऊबरैं,

सतसंगति प्राणी मिलै ॥ १० ॥

ब्रह्मा विष्णु महेश शेष सुखदेव विचारी,

ऋषभ देवदत्त कपिल सांख्यमत के अधिकारी।

सनकादिक सर्वज्ञ ज्ञान बल ब्रह्म स्वरूपा,

नवजोगेश्वर मुक्त भक्ति जिन करी निरूपा॥

तो नारद ध्रुव प्रह्लाद से सन्त अनन्त उधारना।

कह बालकराम पहुंचे पुरुष तिनकी पक्कै धारणां[1] ॥ ११ ॥

लोकविषै अधिकार वदनतैं[2] विप्र उपाये[3],

भृगु दीन्ही उर लात विष्णु वैकुण्ठ सताये॥

जग्य जनेऊ वेद इनहू के ये अधिकारी,

ताही तैं अभिमान ज्ञान बिन अति अहंकारी॥

पर ब्राह्मण सेवग साधके, समझै नर ज्ञानी भगत॥

गाइ वैर ज्यूं सांड की कहि बालकराम पूजै जगत॥ १२।

चारि वेद की साषि[4] विष्णु गीता मे भाषी,

दादूदास कबीर साषि सुणि हिरदै राषी॥

जल थल अगनि प्रवेश बहुत हिंसा तिन माहीं।

पवन दाग निरदोष जीव भच्छनैं[5] करि जाही।

अरु विरह अगनि गोपी दगध,

१ धारणा = निश्चय, विश्वास। २ वदन = मुख। ३ उपाये = पैदा किये।
४ साषि = साक्षी, गवाही। ५ भच्छन = भक्षण, खाना।

ज्ञान अगनि जोगी जरै ॥
कहि बालकराम पर दाग शेष
अज्ञानी औगुण धरै ॥ १३ ॥

॥ साषी ॥

मन चींटो फिरबो करै, काया कुम्भ मधि सोइ ।
माष पतासा सूं लगै, तौ बालकराम थिर होइ ॥ १४ ॥

छप्पय—

उपजणि[1] पंच प्रकार जीव जग मांहि जिग्यासी[2] ।
जाकै जसी प्रीति लगनि तैसो फल पासी ॥
भँवरी बीछू सर्प मकोडी कीडी लागै ।
घटि बधि दरद शरीर राम रसना जपि जागै ॥
पुनि को सुंन्निम[3] को सहज मैं,
को मृतक तिहिं वार जू ।
कहि बालकराम ऐसी दशा,
सो देवै दीदार[4] जू ॥ १५ ॥

मनहर छन्द—

व्यापक अगनि अंधकार को विरोधी नांहि ।
महातेज ताको कछु बाधक न कहिये ॥
जैसे येक पृथ्वी मांहि चिकनता शक्ति कहुं ।

---

१ उपजणि = उपज, विषयप्राप्ति । २ जिग्यासी = जिज्ञासु, इच्छुक ।
३ सुन्निम = सून्या, दसा न जागके । ४ दीदार = अपना रूप ।

जैसे येक जल विषै सिवालहु हाये ॥
जैसे येक देश विषै व्योम माहि बादर ज्यूं ।
और ठोर सुध तासं ताह सिद्धि लहिये ॥
ऐसे येक चेतन अज्ञान अविरोधी भाव ।
कहत बालकराम साषी सुध गहिये ॥ १६ ॥
कै तो भलो बीतराग कामिनी कनक त्याग ।
कूबरी कौपीन कंथा कमण्डलु काठको ॥
कै तो भलो राज साज सेना चतुरंगी संग ।
हाथी रथ सुषपाल दल बल ठाट को ॥
कै तो भलो दाता दान कै तो भलो ज्ञानवान ।
कहत बालकराम वचन निराट[1] को ॥
मनुष जनम पाइ करता न जान्यों कूर[2] ।
धोबी को सो कुत्ता जैसे घर को न घाट को ॥ १७ ॥

इन्दव छन्द—

चेतन ही करि चेतन है सब पिण्ड ब्रह्मण्ड विराट जहांलू ।
चेतन ही करि लोक उंभ सब स्वर्गहु मर्त्य पाताल तहांलू ।
चेतन ही करि थावर जंगम कीट पतंग ब्रह्मादि उहांलू ।
चेतन व्यापक सर्व निरन्तर बालकराम कहै जु कहांलू ॥ १८ ॥

छप्पय छन्द—

गीता विषै जु ज्ञान कृष्ण अर्जुन प्रति गायो ।
पंच विषै को त्याग प्रथम बैराग जनायो ॥

---

१ निराट = बेलाग । २ कूर = क्रूर, दयाहीन ।

वर्णाश्रम अभिमान देह अहंभाव न आनै ।
षट विकार संघात ताहि क्षणभंगुर मानै ॥
अरु जनम जरा मृत दोष दुष सदा चितारैं[1] संत नित ।
कहि बालकराम भूलै नहीं ज्ञान भक्ति वैराग वित[2] ॥ १९ ॥

हिन्दु तुरक न भूमि तुरक हिन्दू नहि पानी ।
हिन्दू तुरक न अगनि समझि विन दुषी अज्ञानी ।
हिन्दू तुरक न पवन तुरक हिन्दू न आकासा ।
चन्द सूर निरपंच्छि[3] रात दिन करहि प्रकासा ॥
अरु एक आतमा सर्व महि हिन्दू तुरक न जानिये ।
कहि बालकराम पायो मरम वर्णाश्रम भ्रम भानिये ॥ २० ॥

छप्पय—

पण्डित सौं नहिं प्यार अधिक मूरख को आदर ।
पाषंडी सौं प्रीति संतमत करै निरादर ॥
बगुला को बहुमान हंस हरिजन गुण त्यागै ।
कोइल सबदन सुणै काग भीषा[4] प्रिय लागै ॥
अरु षल गुड एकहि भाव जहां साह चोर सब सारिषा ।
कहि बालकराम कीमति विना भली बुरी नहीं पारिषा ॥ २१ ॥

---

१ चितारैं = यादकरे। २ वित = मन । ३ निरपच्छि = निष्पक्ष, तरफदारी से रहित । ४ भाषा = बोलना ।

चौदह लोक वषान वेद भागौत सु गावै ।
सप्तलोक आकाश सप्त पाताल सुनावै ॥
भूर्भुवः सुर महरजन तप सत्ति लोक सु ऊँचे ।
अतल वितल सुतल रसातल तलातल ।
महातल पाताल सु नीचे ॥
धाद शेषनाग वैकुण्ठलौं अर्ध ऊर्ध्व दशहुं दिशा ।
चेतन के आधार सब कहै बालकराम व्यापक इसा ॥ २२ ॥

मनहर छन्द—

माला इक तुलछी की दूजी माला रुद्राक्ष ।
तीजी माला सूत ग्रन्थि चोथी वन माला है ॥
पांचवी फटकमणि जीया पोता छठि सुणि ।
सातवीं कपूर मोती आठवीं रसाला है ॥
वैष्णौं तुरक जैन जगत जपत जाप ।
इनके फिराये जम करत न टाला है ॥
श्वासों श्वास सोहं जाप कहत बालकराम ।
माला सोई आला जाके साच शील चाला है ॥ २३ ॥

छप्पय—

उत्तम श्रोता पंच हंस कुरकट मधु माषी ।
बकरी सृप बषान तत्व सुनि निहचै राखी ॥

---

१ बषान = प्रशंसा । २ भागौत = भागवत पुराण । ३ आला = प्रधान शिरेकार, सब से श्रेष्ठ ।

कनिष्ट श्रोता सुनहु चालनी उष्टर मानौं ।

भैंसा वृषभ समान चींचड़ी भेड्या जानौं ॥

अरु जैसे कुरगड हु शिलीमुख बक ज्यों ध्यान कीये रहे ।

ये तेरह श्रोता ग्रन्थ में सु बालकराम असे कहे ॥ २४ ॥

पांवर[1] पशु समान उदर भरि विषै कमावै ।

धर्म नेम पुनि दान देह धरि होइ न आवै ॥

विषई बंछै[2] भोग कर्म करि स्वर्ग हि पाऊँ ।

मुमुक्षु भजिराम भगति करि जनम मिटाऊं ॥

अरु जीवनमुक्त ज्ञानी कह्यो मन मे कछु न कामना ।

कहै बालकराम वाको नही लोक वेद की आमना[3] ॥२५॥

मनहर छन्द—

मीमांसकशास्त्र के कर्ता जैमुनि ऋषि ।

वैशेषिक शास्त्र के कणाद ऋषि मानिये ॥

न्यायशास्त्र के कर्ता कहिये गोतम ऋषि ।

पातञ्जल शास्त्र के कर्ता शेषजी प्रवानिये ॥

सांख्य शास्त्र के कर्ता कहिये कपिल मुनि ॥

वेदान्त शास्त्र के कर्ता व्यासहु बखानिये ।

येई षट् शास्त्र के कर्ता कहे सुनाई ।

कहै बालकराम गुरु प्रसाद तें जानिये ॥ २६ ॥

---

१ पांवर = नीच । २ बंछ = चाहे । ३ आमना = मर्यादा, हद्दबंदी ।

जैसे कोऊ कुम्हेरा[1] के हस्ती बंध्यो घर आय।
आपनो स्वरूप भूलि कुअर पुकार है॥
गैवेर[2] गंवार जाने गदहा कुह्मार को है।
दिन उठि लादे भार आपन संभार है॥
पूरब सहस्त्रकार[3] उदै भयो बलवन्त।
गदहा कुह्मार दोऊ मारि के पछारि है॥
हाहाकार शहर में पर्‍यो चहूं ओर तब।
कहत बालकराम बंध्यो राजद्वार है॥ २७॥

छप्पय छन्द—

सन्त येक भजनीक भक्ति हरि सेवा प्यारी।
दई जोग संजोग दुष्ट ताके गृह नारी॥
दरसन आवै कोई गाइ मारण को धावै।
श्वान देषि उठि भूसै दौरि काटण को आवै॥
तब रोटी पूलो वेसले[4] जथा जोगि आगे धरे।
कहै बालकराम महा पुरुष को जिज्ञासी दर्शन करे॥ २८॥

मनहर छन्द—

चौदहे[5] इन्द्री अध्यातम चौदह विषै अधिदेव।
चौदह देव अधिभूत त्रिपुटी विस्तार है॥

१ कुम्हरा = कुभार। २ गेवर = हाथी ३ सहसकार = सहस्र रश्मि, सूर्य। ४ वेस = पहनावा, स्त्री के सब कपडे। ५ चौदह इन्द्री = ज्ञानेन्द्रिय पाच, कर्मेन्द्रिय पाच, अंत करण चतुष्टय ऐसे, १४ चौदह इन्द्रियें मानी जाती है इन के देवता और विषय भी चौदह चौदह है।

पंचतत्व तीन गुण अखिल ब्रह्माण्ड पिण्ड ।
पञ्च कोष जीव नाम [illegible] [illegible] है ॥
चौदहतों बयालीस जाग्रत में फुरै[1] सब ।
सुपनै में बुधि [illegible] सुषोपनि[2] अन्धकार है ॥
तुरीया[3] चैतन्य साक्षी कहत बालकराम ।
व्यापक अखण्ड [illegible] सर्व का आधार है ॥२९॥

काहे को तू जप करै काहे को तू तप करै ॥
काहे को तू व्रत करि भूख मरै बावरे ॥
काहे को तू जाग करै काहे को तू जज्ञ करै ।
काहे को तीरथ करि वृथा खोवै आवरे ? ॥
काहे तू हिवालै[4] गलै गोविन्द तैं दूरि परै ।
चौरासी भ्रमत फिरै दुष दरियाव रे ? ॥
कहत बालकराम भजिये भगवान नाम ।
काहे को [illegible]रत और विविध उपाव रे ? ॥३०॥

भेट के कवित्त । छप्पय छन्द—

स्वामी दादू साधु आदि धर्म हिरदै धार्यो ।
दया शील सन्तोष गिरा गोविन्द उचार्यो ॥
ज्ञान षड्ग गहि तुरत पिशुन पंचों मन मारे ।
काम क्रोध मद लोभ मोह दल सबै संघारे ॥

---

१ फुरै = प्रतीत हो । २ सुषोपनि = सुषुप्ति । ३ तुरीया = चतुर्थी, चौथी । ४ हिवालै = हिमालय, बर्फ में ।

पुनि जोग अंग गोरषजती, भक्ति अंग योगेश नव ।
ज्ञान ध्यान सुषदेव जिमि बालकराम भणि शेष शिव ॥३०॥

आदि भगत अवतार च्यारि सनकादि कुमारा ।
समदृष्टि निरदोष नन्द जोगेश्वर न्यारा ॥
ऋषभ देवदत्त कपिल वाम परिक्षत यदुराजा ।
ध्रू प्रहलाद सुधीर गह्यो हरि नाम जिहाजा ॥
तो अष्टावक्र वसिष्ठ मुनि, शुक नारद हस्तामलक ।
कहि बालक ये वन्दिये मन वच कर्म सबके तिलक ॥३१॥

ऋषभदेव अवतार तास सुत नव जोगेश्वर ।
ज्ञानवन्त महामुक्त तेज तन तपै दिनेश्वर ॥
कवि, हरि, अन्तरिक्ष, प्रबुधि, जानि पंचमि पिपलाइन ।
अंबरीष पुरुरवा वुद्ध शंकर नवगाइन ।
पुनि परम भक्त हरि पारिषद जनक विदेह संसै हरन ॥
कहै बालकराम असे पुरुष भवसागर तारन तिरन ॥३३॥

ब्रह्मा शिव सनकादि शेष शुक नारद शारद ।
ऋषभ देवदत कपिल वामदेव व्यास विशारद ॥
ध्रू प्रहलाद कबीर नामदेव रका वंका ।
सोझा पीपा धना सैंन हरदास निसंका ॥
रैदास भवन दादू परस नानक काहा ब्रह्म रत ।
जैदेव तिलोचन सबनिको सु बालकराम वन्दन करत ॥३४॥

---

1 संसै = संशय, सन्देह ।

प्रश्नः—ब्रह्मादिक गुरु कौन कौन गुरु आदि महेसुर ।
सनकादिक गुरु कौन कौन गुरु नवयोगेश्वर ॥
ऋषभदेव गुरु कौन कौन गुरु जनक विदेही ।
कदरज के गुरु कौन पिंगला रूप सनेही ॥
ऋषिजडभरथ पुरुरवा, कहि बालकराम विवेक उर ।
अष्टावक्र दत्त कपिल के कौन मन्त्र उपदेश गुरु ॥३५॥

उत्तरः—ब्रह्मादिक गुरु ब्रह्म ब्रह्म गुरु आदि महेश्वर ।
सनकादिक गुरु ब्रह्म ब्रह्म गुरु नव योगेश्वर ॥
ऋषभदेव गुरु ब्रह्म ब्रह्म गुरु जनक विदेही ।
कदरज के गुरु ब्रह्म पिंगला ब्रह्म सनेही ॥
ऋषि जड़भरथ पुरुरवा, कहि बालकराम विवेक उर ॥
इन सबहिन के मानिये ब्रह्म अनुग्रह ज्ञान गुरु ॥ ३६ ॥

व्यासपुत्र सुखदेव ब्रह्म विद् ब्रह्म प्रसंगी ।
जटाजूट अवधूत भागवत कहै अलिंगी ॥
वर्णाश्रम न धर्म जनेऊ जटा न माला ।
संस्कार नहि कोइ जनम जोनेश्वर वाला ॥
यह जीवनमुक्त ऐसी दशा ज्ञान भगति वैराग्यबल ।
कहि बालकराम अमृत वचन शुक मुख श्री भागोत फल ॥ ३७ ॥

भक्ति विषै नहि भेद वेद यूं बोलै बाणी ।
अन्त्यज ब्राह्मण आदि जाति जगदीश न मानी ॥

---

१ अलिंगी = चिन्ह हीन ।

कलि कबीर कुल असुर अनुर कुल प्रगटे दादू ।
भगत विभीषण भये असुर कुल नाहि नहलादू ॥
पुनि गणिका कुब्जा भीलनी गोपी दिढ[1] गोविन्द गहे ।
कहै बालकराम हरिभजन बिन अभिमानी न्यारे रहे ॥ ३८ ॥

माया अञ्जन रहित निरञ्जन कहिये वाकों ।
निर्विकार निर्लेप अजन्मा जानहु ताकों ॥
ऐसो ब्रह्म अखण्ड सर्व व्यापक अविनासी ।
सतचित आनन्द रूप सकल घट ज्योति प्रकासी ॥
आदि अन्त मधि एकरस गुण प्रपंच नहि वासना ।
कहि बालकराम ता ब्रह्म की विरला करे उपासना[2] ॥ ३९ ॥

तेजोमय भगवान ज्योतिमय अन्तरजामी ।
अखिल धाम गोलोक ब्रह्म ईश्वर घननामी ॥
ता ईश्वर के अंश देवता तीन सु कहिये ।
ब्रह्मा विष्णु महेश शक्ति माया की लहिये ॥
अब रजगुण करि ब्रह्म रचे, तमगुण करि रुद्र संहार ही ।
कहै बालकराम यह विष्णु जी सतगुण करि प्रतिपाल ही ॥ ४० ॥

विष्णु लोक बैकुण्ठ, चतुर्भुज सकल विराजे ।
सेवक सेव्य न भेद मुक्ति सारूप्य निवाजे ॥

---

१ दिढ = दृढ, पूर्ण निश्चय से । २ उपासना = भक्ति, पूजा ।

लक्ष्मीपति भगवान सगुण वपु धरि कर आवै।
दश[1] चौबीस[2] न अन्त जिके[3] अवतार कहावै॥
अब कला अंश पूरन कहै ऐसे भेद न ब्रह्म में।
यह बालकराम कहिये कहा ते सब माया भ्रम में॥ ४१॥

मूरति सेवन करहिं सन्तजन प्रगट न सूझै[4]।
मूरति दे न जबाब सन्त अन्तर की बूझै[5]॥
मुरति पाइ न पीवै पाक[6] करि आनि[7] दिखावै।
सन्त लगावैं भोग आप परमेश्वर पावै॥
यह मूरति जड पाषान तजि सन्त सु चेतन गाइये।
कहै बालक राम हरिराम भजि मन वांछित फल पाइये॥४२॥

देह वृक्ष के विषै उभै पंषी को वासा।
फल भुगता सो एक एक नित रहै उदासा।
बढ़ई काल करूर आइ जब काटण लागा।
एक पन्यो ता संग एक उठि पहले भागा॥
यह जीवातम यूं बंधत है सब माने धर्म अनातमा।
कहि बालकराम तव मुक्ति है अनासक्ति परमातमा॥४३॥

व्यापक ब्रह्म अखण्ड पिण्ड ब्रह्मण्ड समाना।
समष्टि व्यष्टि स्वरूप जीव ईश्वर के जाना।

---

१ दश = दश अवतार। २ चौबीस = चौबीस अवतार। ३ जिके = जो
४ सूझै = दीखे ५ बूझै = जाने। ६ पाक = भोजन। ७ आन = लाकर।

निराकार आकार सगुण निर्गुण विस्तारा।
कारण कारज आप नाम गुण रूप पसारा
है सत चित आनन्द एक ही असति भांति प्रिय आतमा।
यह "तत्त्वमसि" पद ब्रह्म है बालकराम परमातमा ॥४४॥

इन्दवछन्द—

एक अखण्डित सर्व निरन्तर व्यापक ब्रह्म उपाधितैं न्यारो।
ईश्वर जीव उपाधि लिये नित कारण कारज हेत विचारो॥
ईश्वर देह विराट अव्याकृत हिरण हु गर्भ सुतीन प्रकारो।
बालकराम स्थूल रु सूक्ष्म जीव के कारण देह संहारो ॥४५॥

ब्रह्म विराजत सर्व निरन्तर चेतन शुद्ध निरंजन न्यारो।
एक अखण्डित व्यापक पूरण सूक्ष्म स्थूल विराट पसारो॥
ज्यों त्रिसतीरण व्योम रह्यो मरि बाहर भीतर अन्त न पारो।
त्यूं सब ठौर जहां तहां अच्युत बालकराम लहै को विचारो॥४६॥

इन्दवछन्द—

सर्व भूत ब्रह्म विषै ब्रह्म सब भूत विषै।
ब्रह्मा अरु कीटलग एक वस्तु भाव है॥
पृथ्वी अप तेज वायु व्योम पञ्च तत्व जैसे।
व्यापक परसपर पूरण प्रभाव है॥
जलचर थलचर व्योमचर जीव जाति।
स्थोवर[1] जंगम[2] मध्य चेतन सु भान्य है॥

---

१ स्थावर = जड जगत। २ जगम = प्राणी जगत।

ऐसो भक्त उत्तम सु भागवत गावै ताहि।
कहत बालकराम जगत की नाव है ॥ ४७ ॥

छप्पयछन्द—

प्रथम जाति मद कहत द्वितीय मद अति माया को।
तृतीय सु कुल मद होइ चतुर मद बल काया को॥
पञ्चम विद्या मद षष्टवों तप मद भारी।
प्रभुता मद सातवों आठवों रूप विकारी॥
येक येक मद होय जो बालकराम गर्व्यों फिरै।
ये आठों होवे जास के सो भोजल कैसे तिरै॥ ४८॥

रचना रची सु कौन कौन यहु जगत बनाई।
ऊंचा टीबा रेत देषि मन करै कचाई॥
पानी दूर पताल सुन्यूं ताहू में षारो।
फोग सरकना जवा भुरट को नाज सवारो॥
ग्रीषम ऋतु छाया दुर्लभ काल पड्यां जावै कहीं।
अब, बालकराम ऐसे कहै 'बाँगड़' में रहिये नहीं॥ ४९॥

तीरथ महिमा जानि द्वारिका सब कोई जाई।
काबा काल स्वरूप जात आवत दुषदाई॥
गोमती करत सनान दान तहां ब्राह्मण मांगै।
दरवाजे होय अटैक छाप लेतां डँडलागै॥

१ गर्व्यों = गर्वमें, अभिमान में। २ जासके = जिसके। ३ टीबा = बालू का टीला। ४ बागड = रेतीलाप्रदेश। ५ अटक=रोक। ६ डडलागैं = कर लगता है।

पुनि काया माया भै[1] घणौ[2], विविध विघन दुख गाइये ।
कहै वालकराम रणछोड के दुर्लभ दर्शन पाइये ॥५०॥

पण्डित कहै प्रसंग बंध अरु मुक्त बषानै ।
अज्ञ न समझै अर्थ भेद जिज्ञासी जानै ॥
येक वृक्ष पर आई वसे नर वानर मेला[3] ।
छाया पकडी सिंह देषि कुदरत का षेला ॥
तव किचकिचाइ वानर गिर्‌यो पर्‌यो काल के गाल[4] ही ।
कहै वालक विचार करि मनुज वच्यो ततकाल ही ॥ ५१ ॥

दश लक्षण संयुक्त ज्ञानप्राप्ति है जाको ।
जीवन मुक्त स्वरूप विश्व महि वन्दन ताको ॥
इहामुत्र वैराग वासना भोगन कोई ।
क्षमा दया निर्लोभ क्रोध पुनि त्यागै सोई ॥
अरु जितेन्द्रिय जन लोक प्रिय दाता गुणी उत्तम जहा ।
कहै वालकराम नहि सोच भय लक्षण ज्ञान जानों तहां ॥ ५२ ॥

ईश्वर के लिये चित्तवृत्ति रहे सदा लीन,
राम राम राम धुनि रामरस पीजिये ।
आप सौं अधिक तासौं प्रेम परा पूरो करे,
आपके समान तासु मित्रता सु कीजिये ॥

---

१ भै = भय, डर । २ घणो = अधिक । ३ मेला = सामिल, इकट्ठे । ४ गाल = मुँह में ।

आपन से लघु तासो करुणा विशेष राखे,
ऐसे जामें चिन्ह सोई सीस धर लीजिये।
दूषण रहित यहु भूषण जगत जोति,
कहत बालकराम, तासों मिल जीजिये॥ ५३।

तन मन धन करि निस दिन लयलीन,
प्रीतम की पूजा मध्य निष्ठा पूर्ण भाव है।
सन्तन को जाने ऐसे जैसे नर देह और,
ताही तें उ क्रम बुद्धि ज्ञान को अभाव है॥
प्राकृत व भागवत गावत निस दिन ऐसे,
जौलों सतसंग विषै उपजे न भाव है।
तौलों शुभ कर्म-योग कहत बालकराम,
साधन प्रथम पैडी मन अटकाव है॥ ५४॥

ज्ञान भक्ति वैराग जोग अंग सांख्य विचारा।
इन के समझि स्वरूप भेष पष पंथ नियारा[1]॥
वर्णाश्रम कुल कर्म जाति को भेदन कोई।
भक्ति करै सो मुक्त ज्ञान जाके उर होई॥
अरु जोगी जंगम सेवड़े बोध संन्यासी लेष हैं।
कहै बालकराम हरि भजन बिन सबै कपट के भेष है॥ ५५॥

॥ इति श्री बालकरामजी का कवित्त सम्पूर्ण॥

1 नियारा = अलग।

अथ छीतरसदाजी के सवइये

इन्दव छन्द—

आइ मिले गुरु दादु कों जे जन,
ते जन जानि पारंगत कीन्हे ।
पाप रु ताप उड़ाई सबै भ्रम,
ज्ञान सुनाइ रु सोधे[1] जु लीन्हे ॥
रंक निवाज कीये जग में पुजि[2],
भाव भगति भण्डार जु दीन्हे ।
हो छीतर नीचतैं ऊंच कीये जीव,
दादु दयाल के जे रंग भीन्हे ॥ १ ॥

ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य रु शूद्र,
संगति बैठि तिन्हो गति पाई ।
शील संतोष रु भगति लही तिन,
ज्ञान रु ध्यान सबै चतुराई ॥
जोग रु जुगति अगम निगम में,
दृष्टि अगाध भजे हरि राई ॥
हो छीतर दादूदयाल है पारस
नाहि परसि मिले सुनि[3] जाई ॥ २ ॥

---

१ सोधे = शुद्ध किये । २ पुजि = पूजनीक । ३ सुनि = शून्य में, ब्रह्म में ।

केतनि कौं सुधि बुधि दई जिन,
केतनि कौं मग[1] लाई जु आदू ॥
केतनि कौं गहि पार लंघाये जु,
बूडत थे विषयारस कादू[2] ॥
केतनि कौं निज निरमल कीहे,
जु मल कुसमल[3] धोये जुगादू[4] ॥
हो छीतर केते अचेत जगाये जु,
नाम में दीन दयाल है दादू ॥ ३ ॥

ऐसी जु मौज[5] करी गुरु शिषनि,
ज्ञान रु ध्यान भये सब पूरा ।
ऋद्धि रु सिद्धि रु भाव भजन में,
नाम सूं लागि भये सिध सूरा ॥
प्रेम रु प्रीति सबै सुष रासि जु,
अब अपराध गये दुष दूरा ॥
हो छीतर दादु उधार कियो शिष,
राम समीप रहे जु हजूरा[6] ॥ ४ ॥

आप उधार कियो भजि साहिब,
औरन हू हरिनाम लगाया ।

---

१ मग = रास्ता, ज्ञानपथ । २ कादू = कीचड़ में । ३ कुसमल = कल्मष । ४ जुगादू = जुगजुग के । ५ मौजकरी = कृपाकरी, आनन्दकिया । ६ हजूरा = हजूरी में, सामने ।

आप पिया रस अमृत स्वामी जी,
औरन हू रस अमृत पाया ॥
आप जप्या अविगति[1] निरञ्जन,
औरन हू निज जाप सुनाया ॥
हो छीतर केती हो आतमा तारी जुं,
दीन दयाल दादू गुरु गाया ॥ ५ ॥

ब्रह्म स्वरूप भया मिलि ब्रह्म में,
वारन पार तहा ल्यो लाई ॥
नूर स्वरूप शरीर किया जिन,
देव निरञ्जन कों मिल गाई ॥
ज्योति स्वरूप हुवा निज स्वामी जी,
नाम सुधारस पीया रे भाई ।
हो दादू की गति अगाध अगोचर,
छीतर दास लखी नहिं जाई ॥ ६ ॥

हूं बलि वारणे[2] जीभ सुरति[3] कूं,
जासू जी देव निरञ्जन गाया ।
हूं सदिकै[4] उन नैनन ऊपर,
पूरण ब्रह्म के नूर लुभाया ॥

१ अविगति = ज्यौरेरहित । २ बलिवारणै = बलिहारी, न्योछावर ।
३ सुरति = अनहद शब्द में लगी वृत्ति । ४ सदिकै = वारणैं ।

हूं कुर्बान किया उन चरननि,
जास चरन अगम कों धाया ॥
हो छीतर दादू की प्रीति कै वारनै,
जाहि की प्रीति सूं राम रिझाया ॥ ७ ॥

परम पुरुष के पंथ चल्या जिन,
हिन्दू तुरक का पंथ जु त्यागा ।
गोरष दत्त की चाल[1] लई उर,
सेव निरञ्जन की हित लागा ।
नाम, कबीर, ज्यूं प्रीति करी हरि,
ऐसे जु ध्यान अजप कै लागा ॥
हो छीतर दादू जी दास बस्या तहां,
जहां ज्योति झिलि मिलि नूर अथागा ॥ ८ ॥

ब्रह्म अपार भज्या निस बासर,
मोल धरे[2] की जी दूरि निवारी ।
निर्गुन ध्यान धरचा उर अन्तर,
सरगुण ध्यान सों प्रीति न धारी ॥
जहां शशि सूर नहीं निस बासर,
तहाँ मन जाय जु नूर[3] निहारी ॥

---

१ चाल = रिवाज, पद्धति । २ धरे की = रक्खी हुयेकी, धरी हुई मूर्तिकी ।
३ नूर = स्वयज्योति ।

हो छीतर चेरा कहै जस कीरति,
ऐसे भये गुरु दादु विहारी ॥ ६ ॥

ब्रह्म ही ज्ञान रु ब्रह्म ही ध्यान रु,
ब्रह्म ही भक्ति करी दिन राती ।
ब्रह्म ही राते रु ब्रह्म ही माते रु,
ब्रह्म ही गाय भये ब्रह्म जाती ॥
ब्रह्म ही सेवा रु ब्रह्म ही पूजा रु ।
ब्रह्म ही पंच चढाई जु पाती ॥
हो छीतर दादु भज्या निज ब्रह्म जु,
और तजी सब दूर भरांति ॥ १० ॥

वेद कुरान मर्जाद तजी दोऊ,
ऐसे भये जन सन्त सयाने[1] ॥
जोगी रु जंगम सेष संन्यासी जु,
बोध भगत के मत न माने ॥
आदि अलेष के ध्यान लग्यो मन,
आन औतार सौं नाहिं प्रवाने[2] ॥
हो छीतर दादू भज्या निज पुरुष जु,
जाइ बिराजे अगम के थाने[3] ॥ ११ ॥

---

१ सयाने = चतुर, प्रवीण । २ प्रवाने = प्रतीत करें, विश्वास करें ।
३ थाने = ठिकाने, जगह ।

अगम ही चाल अगम ही ख्याल,
अगम ही नाम रख्या रंरंकारा ॥
अगम ही ज्ञान अगम ही ध्यान,
अगम ही भाव भगति विचारा ॥
अगम ही प्रेम अगम ही प्रीति,
अगम ही शील संतोष सु सारा ॥
हो छीतरदास अगम ही दादूजी,
अगम ही नाम जप्या इकतारा ॥ १२ ॥

अधर धरा न रंग अधर धरा न संग ।
अधर धरा सू जिन किया हित[1] प्यार जू ॥
अधर धरा स लीन अधर धरा सूं दीन ।
अधर धरा है सोई जप्या इकतार जू ॥
अधर धरा सूं रत अधर धरा सू मत ।
अधर धरा सू रस पीया इक सार जू ॥
हो छीतर अधर धरा सूं जागी अधर धरा सूं लागि ।
अधर धरा सू जिन दादू भये पार जू ॥ १३ ॥

इन्दव छन्द—
भ्रम न भूला महा निज सन्त जू ।
सोधि[2] लीया घर आदि जुगादू ॥

---

१ हित=भला, अच्छा । २ सोधिलिया=तलाश कर लिया ।

येक ही येक जाण्या दिढ चित्त जु ।
त्याग दीया जग वाद विवाद ॥
सिद्धि न सिद्धि रच्या न कराराति ।
मूल गह्या हरि कन्त के पाद ॥
हो भीतर ब्रह्म सरोवर का हंस ।
दीन दयाल सतगुरु दादू ॥ १४ ॥

देव अलेष की सेव करैं नित ।
और नहीं काहू देव को माना ॥
तीरथ ब्रत न देवी न देहुरा ।
हैन निरञ्जन सौं उर ठाना ॥
जे कर्ता घटधारी कहाये जु ।
ताहि नहीं चित अन्तर आना ॥
हो भीतर दादू मिल्या सु निरञ्जन ।
शंकर शेष धरै जिस ध्याना ॥ १५ ॥

जोई अलेष जपा दत्त गोरष ।
सोई अलेष दयाल विचारे ॥
नाम, कबीर गये जिस मारग ।
ताहि जु मारग स्वामी सिधारे ॥

---

१ रच्या = आसक्त हुवा । २ देहुरा = देवस्थान । ३ घटधारी = शरीरधारी अवतार ।

ऋद्धि रु सिद्धि सबै विधि पूरगा ।
भाव भक्ति के पास उधारे ॥
हो छीतर पार भये भजि राम को ।
दादु दयाल सबै गुण सारे ॥ १६ ॥

केई जु सेवक ब्रह्मा विष्णु के ।
केई जु सेवक शम्भु ही सेवा ॥
केई जु सेवक द्वारिका मक्का के ।
केई जु नाम कन्हैया को लेवा ॥
केई जु सेवक देवी दिहाड़ी ।
केई जु अरहन्त नाथ मनेवा ॥
हो छीतर दादु अलेप को सेवक ।
वार न पार नहीं जिस देवा ॥ १७ ॥

काया ही मांहि निरञ्जन पाया हो ।
सन्त सयाना भ्रम्या कहुं नाहीं ॥
पीव के प्रेम भया मतवाला जु ।
माहि मिल्या संग राम रमाहे ॥
बुधि अपार जगी निज तेज में ।
ब्रह्म समाधि अगाध लगाही ॥

---

१ पाग = खजाना । २ उधारे = खालदिये । ३ दिहाड़ी = पाम देव, गोगा, जोभा आदि । ४ मनेवा = मानने वाले । ५ सेवा = मन्त्र । ६ भ्रम्या = बहक, भ्रान्त हो । ७ जगी = सचेत हुई ।

हो दादु जोगीन्द्र की कीरति "छीतर"
साध रु वेद जुगे जुग गाही ॥ १८ ॥

हंस स्वरूप है मोती चुग्या हरि ।
भंवर स्वरूप है कंवल लुभाया ।
मीन स्वरूप पीया रस अम्रृत ।
है मरजीवा[1] जु सिंध समाया ॥
चातृग रुप रह्या निस वासुर ।
होइ चकोर जु चित्त लगाया ॥
हो छीतर भांति अनेक भज्या हरि ।
दादु जी, पीव सु प्रेम बढाया ॥ १९ ॥

त्रिकुटी ध्यान धरया मन निहचल ।
साज सकल ले येकठा कीन्हा ॥
मन चितवृत्ति पवन सुरति कों ।
नाम लगाइ पिया रस भीन्हा ॥
नैंन रु बैन श्रवण नासिका के ।
भोग छुडाय कीये हरि लीन्हा ॥
हो छीतर दादु दयाल मिले हरि ।
आतम राम निरञ्जन चीन्हा ॥ २० ॥

षाजि लिया हरि हिरदे भीतर ।
आदि अनादि सों यहु मन लाया ॥

---

१ मरजीवा = समुद्री गोताखोर ।

सुरति कै तीर पीया रस अमृत ।
जामण मरण जु दूर वितीया ॥
आतम सुन्दरी नाहि स्यौं रातीजु ।
जो धर मांट मंत्र करि रायौ ॥
हो छीतर दादु की है मति मोटी जु ।
शून्य मे शून्य है शून्य समाया ॥ २१ ॥

हरि धेनु का दूध पीया निज वच्छ है ।
आदि रु अन्त का कारज सीधा ॥
मगन गया सुधि नाहि शरीर की ।
होइ विलि रस मांहि जु बीधा ॥
धुनि धरि अभि अन्तर नाम सु ।
ध्यान अगाध अगोचर कीधा ॥
हो छीतर दादु शरीर हो तूर का ।
ध्याइ निरञ्जन लाभ जु लीधा ॥ २२ ॥

जाय विराजे जी ब्रह्म अभे तरि ।
काल रु कर्म गये दुप नाली ॥
ताकी जु छाया सबै जग ऊपर ।
पूरण वृच्छ सबै सुपदानी ॥

---

१ रातीजु = अनुरक्त । २ धर मांड = जमीन आकाश का । ३ राया = राजा स्वामी । ४ मोटी = गहन, विशाल । ५ सीधा = सीझा, सिद्ध हुवा । ६ विलि = लयलीन, एक रूप । ७ बीधा = सराबोर हुवा । ८ कीधा = किया । ९ लीधा = लिया । १० अभे = अभय, निडर ।

छाया रु गवन तें रहित तरोवरे[1]।
आदि रु अन्त सदा अविनासी॥
हो छीतर साषा रु मूल नहीं कुछ।
दादु भया उस वृच्छ का वासी॥२३॥

मौजूद[2] मुकाम न फस[3] किया वसि।
दुई दरोग सबै दुरि कीहा॥
अरवाह[4] मुकाम भया गुसियारत।
षर मिहर दया दिल दीन्हा॥
मावूद[5] मुकाम मावूद सौ षेल्या।
तेज रु पुञ्ज सबै सुष लीन्हा॥
हो छीतर दादु जी जाति अलह की।
षाक षलक के प्यार न षीहा[6]॥२४॥

हैवान[7] को त्यागि हैरान सौं लागा जु।
फारिक होई सांई नित गाया॥
राति हु दीस रम्या दिल हक मैं।
साहिब नूर दरसन पाया॥
मूरति देषि के सिफति करी जिन।
येक ही येक अलाह सराया॥

---

१ तरोवर = तरुवर कल्पवृक्ष। २ मोजूद = शरीर। ३ नफ्स = इच्छानुसार। ४ अरवाह = जीवात्मा। ५ माबूद = ईश्वर। ६ बीन्हा = वशहुवा। ७ हैवान = पशुता।

हो छीतर दादू हो राह माबूद कै ।
और न हू जब यान सुनाया ॥ २५ ॥

पहली पटलि भया पशुतैं नर ।
मेटी अनीति रु नीति मैं आन्या[1] ॥
पीछै जु त्याग किया जुग गंदे का ।
आदि रु अन्त संगी हरि जान्यां ॥
फेर संभाल अघट किया चित ।
पूरण ब्रह्म सु सति[2] पिछांन्यां ॥
हो छीतर दादू मिल्या निज ज्योति में ।
औरन भी हरि मार्ग बखान्या ।

भेद पुरान दोऊ मत छाडे हो ।
नाथ निरञ्जन सूं ल्यौ[3] जोडी ॥
पूरण ज्ञान हिरदै भयो परगट ।
भ्रम रु कर्म की संकल तोडी ॥
आदि अलेख जपा निशि वासुर ।
आन औतार दिये दिल मोडी ॥
हो छीतर ध्यायो है पंथ पुरातन ।
हिन्दू तुरक की राह जु छोडी ॥२७॥

हिन्दू तुरक दोऊ पंथ के बीचि ।
ज्ञान षडग लीये ललकारैं ॥

---

१ आन्या = लाया, लगाया । २ सति = सत्य । ३ ल्यौ = वृत्ति ।

नांवत नैं चल्त देई जु उत्तर ।
स्वांग[1] न भेष नहीं काहू मारै ॥
राग रु दोस रहै रस मातो रु ।
मगन भयो गुण देह त्रिसारै ॥
हो कीनर झूम्भि[2] मकै कोऊ दादू सो ।
ध्यान धैनक[3] सौं केते विडारै[4] ॥२८॥

निर्गुण ब्रह्म परा[5] परमेश्वर ।
सोई सुजांणान सोधि लियो है ।
रीति रु वेस तजी जग अन्ध की ।
निरपखि ह्वै मधि पंथ गह्यो है ।
जोई विचार धुरंधर[6] उपनौ[7] ।
सोई विचार लीये निबह्यो है ।
हो कीनर कांणि[8] न राणो न राव की ।
दादू निसांणां[9] प्रगट कीयो है ॥२९॥

पूरण ब्रह्म सूं लीन कियौ मन ।
काम रु क्रोध दीये अरि मारी ॥
पाप रु ताप रु मोह माया मद ।
लोभ लुबंधि[10] की पेढि[11] विडारी ॥

---

१ स्वाग = बनावट, ढोंग । २ झूम्भि = निरन्तर सामनाकरना । ३ धनक = धनुष ।४ विडार = विदीर्णकिये । ५ परा = परात्पर । ६ धुरंधर = मूलभूत । ७ उपनो = उत्पन्नहुवा । ८ काणि = भय, दबाव । ९ निसाण = चिन्ह । १० लुबधि = लालची । ११ पेढि = दल, फौज ।

स्वार्थ स्वाद तजे सब देह के।
राम रसाइण मैं रुचि धारी ॥
हो छीतर दादू जी लाग हरी रंग।
छांडि जगत भयो भव पारी ॥२०॥

राम रिझाइ कियो अपने बसि
माया रु मोह सौं प्रीति निवारी ॥
मान गुमान नहीं मन मांहि जु।
दीन गरीबी गही निज सारी ॥
सेवा सनमुख ठाढी करै नित।
राति रु द्योस भजै इकतारी ॥
हो छीतर भाइ निरञ्जन के मन।
दादू दयाल सुलखन नारी ॥२१॥

भले ही औतार लीयो जग दयाल जी
भूलि पडे जीव मारगि लाये ॥
गडत थे भवसागर आगर में।
बाह पकड जु पार लंघाये ॥
काम रु क्रोध की भाहि अनन्त थैं।
उबारि लीये रस अमृत पाये ॥

१ ठाढीकरै = सम्मुख उपस्थितहो। २ भलेही = बहुत ठीक, जरूरी ही।
३ भाह = ज्वाला।

अथ पेमदासजी का रेषता

बन्दगी करेगा बन्दा, सोई कछु पावेगा।

रहेगा गरीबी मे गलतान गल नाम बीच॥

नही तो सकल सब, गुह का गमावेगा।

करेगा हिसाब, करतार जो किताब[1] देखि॥

काढि बाकी ताहि ताते[2] थंभ सो लगावेगा।

तब तेरे ताईं तहा होइगी तभी है ऐसी॥

परवरदिगार बिना कौन काम आवेगा।

प्रेमदास कहता है उदास की सौंह बाबा

बन्दगी करेगा बन्दा साई कछु पावेगा॥ १॥

तुझे पैदा किया उन, जानिके जहान बिच।

मालिक महरबान करने को बन्दगी॥

दुनिया से लागि के अलाह आजि भूलिगया।

कुफर[3] कमाया कछु करी नही बन्दगी॥

इश्क इबादती[4] मे एक सो यकीन[5] राखी।

राज के हजूर तेरे कीजिये न रंदगी॥

प्रेमदास जानेगा अवाज सो न मानेगा तो।

परेगी षवर तब होगी सरमंदगी॥ २॥

---

१ किताब = कर्म फल भोग। २ ताते = गर्म। ३ कुफर = झूठ। ४ इबादती = पूजा। ५ यकीन = विश्वास।

हाथी माल मुलक बेहेरा घोरा पेस पांना।
जेना कुछ देषे बन्दे साथ भी न चलेगा॥
आवैगा हलकारा जब छाडेगा पसारा सब।
बन्दगी बिना जहांन दोजख में जलैगा॥
बूझि देषि दिल में सदा भी कोई जिया नहीं।
मौत का तमाचा आगे किसीतैं न टलेगा॥
न कर गुमान मनी पेस अलमेस देषि।
पेमदास पव तन पाक बीच रैलेगा॥३॥

मादर के सिकम बीच आर्जीजी करता था।
बन्दगी का कौल कर दुनियां में आया है॥
जोष में जहांन देषि फरामोष कीया सोई।
गाफिल गुमानी देषो कहां दिल लाया है॥
मांगेगा हिसाब तब होवैगा हवाल कौन।
अब तो पुस्यौली तेरे ईहै मन भाया है।
बदी कों बिसारि नेकी नांव सूं नजीक रहु।
पेमदास कुफ्र छोड पुब तन पाया है॥४॥

---

१ बेहेरा = बहुत सा। २ दोजख = नरक। ३ बुझि = समझ, विचार ४ रैलेगा = मिलजायगा। ५ मादर = माता। ६ सिकम — गर्भ में। ७ आर्जीजी = विनती। ८ कौल = प्रतिज्ञा। ९ फरामोष किया = टाला नजर से बाहर किया। १० पुस्यौली = प्रसन्नता, खुशी।

काफिर कहावे जे वे कुफर कमाते हैं।
साहिब की वन्दगी विसारिके बुरे अमल ॥
दीने की मंजिल छोडि दुनियां सो राते हैं।
दिल में दुई दरोग मना जैसे माने भोग ॥
हक न कमावे जी हराम माल पाते है।
खाफ न करै धनी का गुमर गुमान वीचि ॥
गरम गम्री मांझ दोजग कों जाते है।
षेमदास कोई षोजी तालिब को भिस्त रोजी ॥
काफिर कहावें जे वे कुफर कमाते हैं ॥ ५ ॥

पातिशाह पाजी राजा रक भावै कोई करो।
बन्दगी कबूल सांई सबही की मानैगा ॥
बाह्मण चमार हिन्दू तुरक हलाल षोर।
देषसीन ऊंच नीच जाति की न जानैगा ॥
एक रोज काजी ह्वै के बैटेगा षुदाइ जेरे,।
जरे का हिसाब दूध पानी करि छानेगा ॥
षेमदास आशिका को देगा दीदार आप।
गाफिलों को बीनि बीनि बेहवाल रानैगा ॥ ६ ॥

---

१ अमल = काम में लाना, व्यवहार । २ दीन = धर्म । ३ जेल = रास्ता । ४ तालिब = मुमुक्षु । ५ भिस्त = स्वर्ग । ६ जी = कमाई । ७ पाजी = बदमाश । ८ कबुल = मजूर, स्वीकार । देखसीन = देखेगा नहीं । १० काजी = फैसला करने वाला, न्यायाधीश । ११ दीदार = दर्शन । १२ रानेगा = उबालेगा, तकलीफ देगा ।

हिन्दू अरु तुरक खुदाइ का जहान सब।
बेगाना न कोई भाई पेस करि जानिये॥
दोइ फरजन्द[1] एक बाप करि जाने कोई।
दोनों का दरद दुई दिल में न आनिये॥
राषि इषलास[2] सब सच्चे की सगाई साधि।
मिहर महब्बत सों बन्दगी बखानिये॥
बेपीर बेराह बद नजर औ बदफैल।
खेमदास कोई जाति बेईमान गानिये[3]॥ ७॥

मका रु मदीनां पंच रोजे हज हाजिर है।
कब जब साहिब की दिल मैं करारी है॥
दाइम दरोग बदी कुफर कबूल कीन्हे।
एक रोज आखिर खुदाइ बिना ख्वारी[4] है॥
कोई न करैगा बुरे राह में मदाह[5] तेरी।
मालिक की मौज बिना खानर बेजारी है॥
ख्वाही[6] पेत मालिक सों ख्वाही तू पलक लागि।
कहता है खेमदास याही तेरी बारी है॥ ८॥

अजाजील राग्या न मान्यां सिदक[7] महम्दका।
जैसा जो करेगा बन्दा तैसा कोई पावेगा॥

---

१ फरजन्द = सन्तान, पुत्र। २ इषलास = दोस्ती, मित्रता। ३ गानिये = समझिये। ४ ख्वारी = दुर्दशा, बुरीहालत। ५ मदाह = मदद, सहायता। ६ ख्वाही = चाहे। ७ सिदक = विश्वास, समर्पण।

त्रास वह जानिके सुजान नर डरि है ॥
षेमदास षसम पुदाइन पुदी का राजा ।
पूर्वी नही पूव के कोये में दुई धरि है ॥ १३ ॥

कर सके जाका नाम क्या न होवे उसतें ।
फेर भी पठावे ज्ञान और भी दिपावे आन ।
कादिर न कुदरति जानी जाइ तिसतें ॥
जिमी असमान असमान हू ते जिमी करे ।
कीरा कोह काह कीरी मेटी जाइ किस ते ॥
न कछू तें कछू अफलाफ तें विलंद करे ।
बेनि मून बेचि मून दिन करे निसि ते ॥
षेमदास और की खुदान राष आप खुद ।
कर सके जा का नाम क्या न होइ उस तें ॥ १४ ॥

ओलिया महम्मद नें मारिके जिलाई गाइ ।
तेरी कान कूंवति है जु मारि मारि षात है ॥
जा की राटी साग साथ ऊमर गुदारी मीयां ।
खाह नर जानी जानी साहित सिफात है ॥
पढिये कतेब माहि जरें जरें का हिसाव हैगा ।
मोट का जवाब कोन बूझने की बात है ॥
षेमदास जाने कोई कहम धरेगा सोई ।
मिहर करेगा जा कों मालिक की दादि है ॥ १५ ॥

---

१ काद = हाथी । २ कूवति = करामात ।

अजाये भी न जाइगी कमाई किसी दौलत की।

नेकी रु बदी का खेत बुवेगा सो लुनेगा ॥

देखिये निरताइ कछु जानिये जहांन ख्वाब।

एक रोज जिमीं में मौजूद मिटी सनैगा ॥

रहेगा हमेश एक राजिक रहीम सच्चा।

और सब फना फनी कौन केते गिनैगा ॥

राखिये करार उस पैदा के करईया सेती।

खेमदास दीन में दीदार रोजी बनेगा ॥ १६ ॥

॥ इति खेमदासजी का रखता सम्पूर्ण ॥

॥ श्रीदादूदयालवे नमः ॥

॥ अथ वाजिंदजी का अरिल ॥

(सुमरण को अंग)

अधम नाम पाषाण तिरे नर लोइरे ।

तेरा नाम कह्यो कलि मांहि न बूडे[1] कोइरे ।

कर्म सुकृति इकवार विलै[2] होजायगे ।

हरि हा वाजिद हस्ति के असवार न कूकर खाहिगे॥१॥

राम नाम की लूट फबी[3] है जीव कूं ।

निसवासर वाजिद सुमरतां पीव कूं ॥

यही बात प्रसिद्ध कहत सब गांवरे ।

हरि हां अधम अजामेल तिर्यो नारायण नांवरे॥२॥

केसो रमता राम भजो भगवन्त रे ।

लागि रहे बहु सन्त क कोटि अनन्त रे ।

विद्या वेद पुराण पढे ते बावरे ।

हरि हां वाजिद राम भरोसे एक सोही जिन रावरे॥३॥

गीता कवित्त श्लोक प्रबन्ध बखानिये ।

तिन में हरि को नाम निरन्तर आनिये ॥

---

१ बूडे = डूबता । २ विलै = विलीन, समाप्त । ३ फबी = जंची ।

जिन वाजिंद विचित्र दुरावे[1] कौन सूं ।
हरि हां वाजिद सब सालन[2] को स्वाद लो इक नोंन सूं॥४॥

डाल छाडि गहि मूल मान सिष मोर रे ।
बिना राम के नाम भलो नहिं तोर रे ॥
जो हमको न पतियाय[3] बूझै[4] कहु गांव में ।
हरि हां वाजिद जप तप तीर्थ व्रत सकल इक नाम में॥५॥

ज्यूं त्यूं करके कपट ही गोविन्द गाइये ।
राम नाम के लेत पाप कहां पाइये ।
मन वच कर्म वाजिद कहै तूं लागि रे ।
हरि हां पकरहुं जान अजान जरावे आग रे॥६॥

और जोर[5] सब छाड राम को गाइये ।
मुक्ति करै पल माहिं भोजल[6] गाइये ॥
बसो[7] दास के बास[8] हाथ ले जापनी ।
हरि हां वाजिद जलत है किहि काम अरे निधि आपनी॥७॥

जन्म जात है वादि[9] याद कर पीव कूं
मुस्किल सब आसान होइ है जीव कूं ॥

---

१ दुरावें = छिपावे । २ सालन = तरकारी, साग । ३ पतियाय = विश्वास करे । ४ बूझ = पूछ, जानकर । ५ जोर=बल, मदद । ६ भोजल = संसार में आना जाना । ७ बसो = रहो । ८ बास = स्थान, जगह । ९ वादि = व्यर्थ, फालतू ।

जाके हिरदै राम रैणदिन रहत है।
हरिहां वाजिद नहीं मुक्ति में फेर सन्त सब कहत है॥८॥

गाफिल रहिवा वीरे[1] कहो क्यू बनत है।
रे मानस[2] का श्वास जुरा[3] नित गिनत है॥
जाग लागि हरि नाम कहा लगि सोइ है।
हरि हां चाकी के मुखधरे सु मैदा होई है॥९॥

आजि सु तो नहीं काल कहत हूँ तुझकू।
आवै वैरी जाग जीव में मुझकूं॥
देखत अपनी दृष्टि खता[4] क्यूं खात है।
हरिहां वाजिद लोहा को सो नाव चल्यो अब जात है॥१०॥

रहो द्यौस[5] अरु रैण आपणो पीव कूँ।
माया मोह जंजाल पटक[6] मत जीव कूं॥
कुटुम्ब बन्धु घर धन्ध[7] नहीं को तेर है।
हरिहा वाजिद बादल की सी छांह जात नहीं बेर[8] है॥११॥

अजब ढाल है एक राम के नाम की।
जे कोई जाणे दाव उसी के काम की॥
शिव सनकादिक शेष लिये रहे वोटरे।
हरिहां वाजिद यम टाला दे जाय लगे नहिं चोटरे[9]॥१२॥

---

१ वीर = भाई। २ मानस = मनुष्य। ३ जुरा = बुढापा। ४ खता = धक्के, गोता। ५ द्योस = दिवस, दिन। ६ पटक = गिरा। ७ धन्ध = काम। ८ वेर = समय। ९ वोटरे = आड, सहारा।

(विरह को अंग)

कहियो जाय सलाम हमारी राम कूं ।
नैंण रहे झड लाय तुम्हारे नाम कूं ॥
कमल गया कुमलाय कल्यां भी जायसी ।
हरिहां वाजिद इस वाडी में वहुरि न भँवरो आयसी॥१॥

चटक चांदणी रात विछाया ढोलिया ।
भर भादव की रैण पपीहा बोलिया ॥
कोयल शब्द सुणाय राम रस लेत है ।
हरिहां वाजिद दाझ्यो ऊपर लूंण पपीहा देत है॥२॥

रैण सवाई वार पपीहा रहत है ।
ज्यूं ज्यूं सुणिये कान करेजा करत है ॥
खान पान वाजिद सुहात न जीव रे ।
हरिहां फूल भये सम सूल विना वा पीव रे॥३॥

धाइ धाइ मोहे खाइ सेज नहिं राम है ।
दीपक मंदिर बाल सु विरथा काम है ॥
हार डार शृंगार तैल तमोल है ।
हरिहां विना कंत के मिलण सबै ही मूल है॥४॥

---

१ कल्या = पखुडियां । २ भँवरा = भ्रमर, जीव । ३ चटक = चटकीली । ४ ढोलिया = पिलंग । ५ दाझ्यो = जला हुवा । ६ सवाई वार = अधिक समय । ७ धाइ धाइ = दौड दौड । ८ सेज = शयनस्थान । ९ वार = जला । १० तमोल = पान ।

इक तो कारी रैंग ऐन[1] मनो सापनी।
दूजी चमकै बीज डरावे पापनी॥
हां ? हां ? हूं बलिजाऊं[2] मिलावो पीव कूं।
हरिहां विना नाथ के मिले चैन नहिं जीव कूं॥५॥

मोर करत अति सोर चमक रही बीजरी।
जाको पीव विदेश ताहि कहां तीजरी[3]॥
बदन[4] मलिन मन सोच खान नहिं खात है।
हरिहां वाजिद अति उनमन[5] तन छीण रहत इह भांति है॥६॥

पंछी एक संदेश कहो उस पीव सूं।
विरहनि है बेहाल[6] जायगी जीव सूं॥
सींचनहार सुदूर सूक भई लाकरी[7]।
हरिहां वाजिद घर ही में बन कियो वियोगन बापरी॥७॥

विरह बुरी बलाय दुहाई राम की।
लीनी पैंठ मरोड़ क काया चामकी॥
जक तक लागत नीव चलत नहिं ठोर सू।
हरिहा वाजिद दाना देव रु भूत लगे सब ओर सू॥८॥

---

१ ऐन = जैसे। २ बलिजाऊं = वारदूं। ३ तीजरी = तीज का त्योंहार। ४ वदन = मुख। ५ उनमन = उदास। ६ बेहाल = बुरीहालत। ७ लाकरी = लकड़ी की तरह, कृश।

बालम बस्यो विदेश भयावह भौन है।
　　　　सोवे पाँव पसार जु ऐसो कौन है॥
अति ही कठिन यह रैण बीतती जीव कूं।
हरिहां वाजिद है कोई चतुर सुजान कहे जाय पीव कूं॥९॥

पीव बस्या परदेश क जोगन मैं भई।
　　　　उनमनि मुद्रा धार फकीरी मैं लई॥
ढूँढ्या सब संसार क अलख जगाइया।
हरिहां वाजिद वह सूरत वह पीव कहूँ नहि पाइया॥१०॥

पिवजी तुम बिन जीव तपै दिनरात है।
　　　　कहे कौन पतियाय दुखी बिललात है॥
भर भादों की रैण दम्मकै दामनी।
हरिहां वाजिद जा को पीव परदेश भगै क्यूँ भामिनी॥११॥

पत्री हू हम पासन आई रावरी।
　　　　दृगन बहै बहु नीर कहै सब बावरी॥
कौन जियै सें जियै हानि है नेह में।
　　　　हरिहा निशदिन तलफै प्राण रहे क्यूं देह में॥१२॥

---

१ बालम = पति। २ भौन = घर। ३ ढूँढ्या = तलाश किया। ४ तपै = जले। ५ पतियाय = विश्वास करे। ६ बिललात = विलाप करे। ७ भामनी = पत्नी, स्त्री। ८ पत्री = चिट्ठी। ९ रावरी = आपकी। १० बावरी = पागल।

उमड चले दोऊं नैन चैन नहिं चित्तजी ।
हरि जी तुमरो पंथ निहारूँ नित्त जी ॥
अब जिन करहु अबीव आप मिल मोह कू ।
हरिहां वाजिद तनमन जोवन प्राण समर्प्यो[1] तोहि कू॥१३॥

लम्बे[2] लेत उसांस[3] हियो[4] भरि आइ है ।
लगी विरह की अग्नि सु कौन बुझाइ है ॥
आह करत है जीव निकस ही जाई है ।
हरिहां बालम बिछुरे वीर मूवाँही[5] आइ है॥१४॥

निश नहिं आवे नीद अन्न नहिं खात है।
पल पल परै न चैन जीव यह जात है ॥
तुम तरवर हम छाह फेर क्यू कीजिये ।
हरिहां वाजिद घर पर अन्तर खोलक दरसण दीजिये॥१५॥

जव तैं कीनो गौन[7] भौन नहि भावही ।
भई छैमासी[8] रैण नींद नहि आवही ॥
मीत तुम्हारी चींत[9] रहत है जीव कू ।
हरिहा ! वाजिद वो दिन कैसा होइ मिलो हरि पीव कूं॥१६॥

---

१ समर्प्यो = अर्पणकिया, भेटकिया । २ लम्बे = दीर्घ । ३ उसास = ऊँचे श्वास । ४ हियो = हृदय । ५ मूँवाही = मरेही । ६ घटपट = हृदय के किवाड । ७ गौन = गमन । ८ छैमासी = लम्बी, छ. महीने की । ९ चिंत = चिन्ता, याद ।

काजल तिलक तमोल तुमारो नाम है।
चोवा चन्दन अगर इसी का काम है॥
हार हमेल सिंगार न सोहे राखडी।
हरि हां वाजिन्द जब जीव लागे पीव और क्यूं आखडी॥१७॥

कहिये सुणिये राम और नहि चिन्त रे!।
हरि चरणन को ध्यान सु धरिये नित्य रे॥
जीव विलंब्या पीव दुहाई राम की।
हरि हां सुख सम्पति वाजिद कहो किस काम की॥१८॥

तुम ही विलोकत नैन भई हूं बावरी।
झोरी डंड भभूत पगन दोऊं पांवरी॥
कर जोगण को भेष सकल जग डोलि हूँ।
वाजिन्द ऐसो मेरो नेम राम मुख बोलि हूँ॥१९॥

(पतिव्रता को अंग)

सूर कमल वाजिन्द न सुपने मेल है।
जरै घोस अरु रैण कडाई तैल है॥
हम ही में सब खोट दोष नहि श्याम कूं।
हरि हां वाजिन्द ऊंच नीच सो बन्धे कहा किहि काम कूं॥१॥

---

१ राखडी = राखी, पहुँची। २ आखडी = ठोकरखाई। ३ विलंब्या = लगा। ४ विलोकत = देखत। ५ झोरी = झोली। ६ भभूत = भस्म। ७ पावरी = खडाऊ। ८ सूर = सूरज। ९ खोट = कसूर, अपराध।

आवेगे किंहि काम पराई[1] पौर के ।
मोती जर वर जाहु न लीजे और के ॥
परिहरिये वाजिन्द न छूवे माथ[2]को ।
हरिहां पाहन[3] नीको[4] वीर नाथ के हाथ को ॥ २ ॥

गहो क छाडो हाथ नाथ तुम लोई रे ! ।
विना पीव या जीव शरण[5] नहिं कोई रे ! ॥
चरण कंवल को ध्यान रैण दिन धरेंगे ।
हरि हां और जोर वाजिन्द कहो क्यूं करेंगे ॥ ३ ॥

भूखे भोजन देय उघारे[6] कापरो ।
खाय धणी[7] को लूण जाय कहा बापरो ॥
भली बुरी वाजिन्द सबै ही सहेगे ।
हरिहां दरगह[8] को दरवेश यहां ही रहेगे ॥ ४ ॥

दूरन जइये मीत रहो पगमांडिकैं[9] ।
कहो कहा कुशलात धणी कूं छाडि कै ॥
लाख बजावो गाल आपणां[10] दास सूं ।
हरिहां वाजिंद हाथ विकायो नाथ जाय क्यूं पास सूं ॥५॥

---

१ पराई पौर के = दूसरे घर के । २ माथ = शिर । ३ पाहन = पत्थर । ४ नीको = अच्छा । ५ शरण = आधार । ६ उघारे = नगे । ७ धणी = मालिक ८ दगरह = दरगाह, ईश्वर के घर । ९ पगमांडि के = पैर रोपके, स्थिरहो के । १० आपणा = अपना ।

घणी घणी किन कहो सकैं क्यूं बोलि कैं ।
जाणों सकल जहान लियो है मोलि कैं ॥
जदपी जन वाजिन्द खसैं बहु गोंड ही ।
हरिहां ! तदपि पिव के पांव नहीं तूं छोड ही ॥६॥

दरगह बडो दिवान न आवे छैंह जी ।
जे शिर करवत वहे तो कीजे नेह जी ॥
हरि तें दूर न होय दर्द कूं हेरिकें ।
हरिहां वाजिन्द जानराय जगदीश निवाजैं फेरिकैं ॥७॥

(साध को अंग)

एक राम को नाम लीजिये नित्य रे ।
और वात वाजिन्द चढै नहिं चित्त रे ॥
वैठे धोयव हाथ आपणां जीव सूं ।
हरिहां दास आस तज और वंध्ये है पीवसूं ॥ १ ॥

जगके औरां देव निजर नहिं आव ही ।
विना आपणां ईस शीश नहिं नावहीं ॥
साध रहे शिर टेक प्रभु के पोरसें ।
हरि हां ! दास पास दिवान विन्धे क्यूं और सूं ॥ २ ॥

---

१ घणी = ज्यादा । २ मोलिक = खरीदहुये । ३ जदपि = यद्यपि । ४ खसैं = रगड़ते है । ५ गोंड ही = गोडे । ६ दिवान = दरबार । ७ छेहजी = अन्त । ८ दरद = विरह की पीड । ९ हेरिके = तलाश करके, खोजके । १० निवाजैं = कृपाकरे । ११ बन्धे हैं = लगेहुए हैं । १२ पोरसू = दरवाजेपर ।

अविनासी की ओट[1] रहत हैं रैनदिन।
विना प्रभू के पांय भजै नहिं एक छिन ॥
जेते जग के जीव जरत है धूप में।
हरि हां ! दीपक ले दोऊं हाथ परत है कूप में ॥३॥
भगत जगत में वीर ! जानिये ऐन[2] रे॥
श्वास शरद मुख जरद[3] निर्मले नैन रे ॥
दुरमति गई सब दूर निकट नहिं आव हीं।
हरि हां साध रहे मुखमौनक गोविन्द गावहीं ॥४॥
कुंजर कीरी आदि सर्व सूं हेत है।
हिरदै उपजै ग्यान दुःख नहीं देत है ॥
दया मया[4] मुख मीत ! अल्यो[5] नहिं बोलि हैं।
हरि हां ! उन साधन के साथ नाथ ज्यूं डोलि है ॥५॥
कहा बरणों वाजिद बडाई जन की।
कामकल्पना दूर गई सब मन की ॥
अष्ट सिद्धि नव निद्धि फिरत है साथ रे।
हरि हां दुनिया रंग कसूम्ब गहे क्यूं हाथ रे ॥ ६ ॥

(उपदेश को अंग)

प्रत्यक्ष देखे नैन श्रवण पुनि सुनत है।
ऊसर बोवे बीज कहां सू लुणात[6] है ॥

---

१ ओट = आड, आसरा। २ एन = खास, ऐसा। ३ जरद = पीला। ४ मया = ममता, प्रेम। ५ अल्यो = बुरा शब्द। ६ लुणात है = काटता है।

चरण कवल चित देय नेह तज और सूं ।
हरि हां ! वाजिंद तो देखैं ये नैन श्याम सिरमोर सूं ॥१॥

हरिजन बैठा होय तहां चल जाइये ।
हिरदै उपजै ज्ञान रामगुण गाइये ॥
परिहरिये वह ठाम भक्ति नहिं राम की ।
हरि हां वाजिंद बीन विहूंणी जान कहो किस काम की ॥२॥

साधां सेती स्नेह लगे तो लाइये ।
जे घर होवे हांण तहुन छिटकाइये ॥
जे नर मूर्ख जान सो तो मन में डरे ।
हरि हां वाजिंद सब कारज सिध होय कृपा जे वह करे ॥३॥

मन कुंजर महमन्त मरे तो मारिये ।
कनक कामणी दोष टलै तो टालिये ॥
साधों सेती प्रीति पलै तो पालिये ।
हरिहां वाजिन्द राम भजन में हाड गलै तो गालिये ॥४॥

डिगतो देवल देख दूर सूं धोकिये ।
नृप अनीति जांण नगर कूं छोडिये ॥

---

१ दरवै = दयाकरें, पिघलें। २ ठाम = जगह। ३ बीन = दूल्हा, वर। ४ विहूणी = विना। ५ हांण = नुकसान। ६ छिटकाइये = त्यागिये। ७ मदमन्त = मतवाला। ८ हाड = शरीर,, हड्डियें। ९ देवल = मन्दिर। × डिगतो = झुकता। १० धोकिये = नमस्कार करिये।

सिंह ही सर्प सुनार छेडे तो छाडिये ।
हरिहां वाजिन्द सिला तले को हाथ कढे तो काढिये ॥५॥

वा सरवर की पाल कमल कुमलांयगे ।
रैण लिये विसराम भोर उठ जांयगे ॥
मान्या मान गर्जिद्र काग पुनि खांहिगे ।
हरिहां वाजिद भयंकर लगै वा ठौर सन्त रमजांयगे ॥६॥

परमेश्वर के जीव प्रीति सूं पूजरे ।
अतीत अभ्यागत देखन आनि दूंजरे ॥
गर्द मांहि है मर्द कद्र नहिं चूंपिरे ।
हरिहां वाजिद अपनी शक्ति समान म्हेलिं कुछ मुपरे ॥७॥

माया मुक्ति राख वधाई कौन कूं ।
वाजिद मुट्ठी धूर सगी है पौन कूं ॥
यैद करत है दाम काम किहि आइ है ।
हरिहां वाजिद लोग वटाऊ वीर षोलि के खाई है ॥८॥

वेग करहूं पुन दान वेरै क्यूं बनत है ।
दिवस घडी पल जामें जुरा सु गिनत है ॥

१ छडे = छूटे । २ तले = नीचे । ३ सरवर = सरोवर । ४ रम जायगे = चलेजांयगे । ५ अतीत = निरभिमानी । ६ अभ्यागत = गरीब, अतिथि । ७ दूजा = दूसरा । ८ गर्द = धूल । ९ कदर = ईज्जत । १० चूपि = चूक । ११ म्हेलि = रख, धर । १२ मुक्ति = बहुत । १३ दाम = दौलत । १४ बटाऊ = राहगीर । १५ वेर = बेर । १६ जाम = पहर । १७ जुरा = बुढापा ।

मुख पर देहैं थाप सूंजे सब लूटि है।
हरि हां जम जोलिम सूं वाजिद जीव नहि छूटि है ॥९॥

रात्यों पसर चराय दिवस हल हांकणा।
नैणां आवे नींद उणींदा झाकणां ॥
अध जीम्या उठ जाय सरै नहिं कामरे।
हरिहां दुरिस कहै वाजिद भज्यो नहि रामरे ॥१०॥

पवन हू लगे न ताहि तहां ले गोवही।
रीते हाथ न जाय जगत सब जोवहीं ॥
या माया वाजिद चलत कहा साथ रे।
हरिहां बहते पाणी वीर परवाले हाथ रे ॥११॥

कहै वाजिद पुकार सीप एक सुनंरे।
ओडो वांकी वार आइ है पुनंरे ॥
अपनों पेट पसार बडो क्यूं कीजिये।
हरिहां सारी मैंते कौर ओर क्यूं दीजिये ॥१२॥

धन तो सोई जांण धणी के अर्थ है।
वाकी माया वीर पाप को गरथ है ॥

---

१ सूज = सामग्री। २ जालिम = जुल्मी। ३ हाकणा = चलाना। ४ नैणा = आंख। ५ उणींदा = बिना सोंये। ६ झाकणा = देखना। ७ दुरिस = दुःखी होकर। ८ गोवही = छिपावे, गाडे। ९ जोवही = देखे। १० परवाले = धोवे। ११ सीप = उपदेश। १२ आडो = आगे। १३ वांकी = टेढी। १४ वार = समय। १५ कौर = ग्रास। १६ अर्थ = काम। १७ गरथ = ढेर, इकट्ठा।

जो अब लागी लाय बुझावे भौनरे[1]।
हरिहां वाजिंद बैठ पथर की नाव पारगयो कौनरे ॥१३॥

जो भी होय कुछ गाँठि[2] खोलि कै दीजिये।
साईं सबही मांहि नांहि क्यूं कीजिये
जाको ताकूं सौंप क्यू न सुख सोवही।
हरिहा अन्त लुणै[3] वाजिंद खेत जो बोवही ॥१४॥

अर्थ लगावो राम दाम[4] तुम आपने।
बिछुन्या मिलन होय भया सुनि सुपने॥
माया चलती बेर हाथ किन पकरी।
हरिहां वाजिंद खोखी[5] हांडी हाथ बटोरे[6] लकरी ॥१५॥

धर्म करत वाजिंद बेर क्यू कीजिये।
दुनिया बदले दीन[7] बेग उठि लीजिये॥
भरि भरि डारहु बाथ[8] नाथ के नांवरे।
हरिहां जड काटत फल होइ कहत सब गांवरे ॥१६॥

जोध[9] मुये[10] ते गये रहे ते जांयगे।
धन संचता दिन रैण कहो कुण[11] खांयगे॥

---

१ भोन = घर। २ गाठि = पास ३ लुणै = काटे। ४ दाम = दौलत। ५ खोखी = खाली। ६ बटोरे = एक जगह करे। ७ दीन = धर्म। ८ बाथ = दोनों हाथ मे। ९ जोध = शूरवीर। १० मुये = मरे। ११ कुण = कौन।

तन धन है मिजमान[1] दुहाई राम की ।
हरिहां दे ले खर्च खिलाय धरी किंहि काम की ॥१७
निसवासर वाजिद संच[2] धन बावरो ।
सांझ परी तब बीर कहां गयो तांवरो[3] ॥
कौडी कियो कलेश वृथा ही लोय रे ।
हरिहां तीतर तल चुग जाय कहत सब कोय रे ॥१८॥
अटक नदी अकराल[4] अजब है आकरी[5] ।
बुरी कावल की म्होम धणी की चाकरी[6] ॥
बीच बीच आधार चलत जल सिन्धु का।
हरिहां ! वाजिद सो नर उतरे पार होय हरिका पका[7] ॥१९॥
गहरी राखी गोय[8] कहो किस काम कूं ।
या माया वाजिद समर्प्यो राम कूं ॥
कान अंगुली मेलि पुकारे दास रे ।
हरिहां ! फूल धूल में धरे न फैले वास[9] रे ॥ २०

(चिन्तामणि का अंग)

आब बन्धी वाजिद एक ही मालि मूं ।
रुधिर मांस अरु हाड पलेट खाल मूं ॥
चुपरै तल फुलैलक काया चामकी ।
हरिहां ! देह खेह हो जाय दुहाई राम की ॥ १ ॥

---

१ मिजमान = मेहमान । २ संच = इकट्ठा कर । ३ तावरो = धूप । ४ अकराल = विकराल, डरावनी । ५ आकरी = तेज । ६ चाकरी = नौकरी । ७ पका = दृढ़, मजबूत । ८ गोय = छिपा । ९ वास = गन्ध ।

खीर खांड अरु घृत जीव कूं देत है।
पान फूल की वास रैंग दिन लेत है॥
तांते पांणी नहाय चुपरि है देह रे।
हरिहां सो तन जन वाजिद होय हैं खेह रे॥ २॥

सरवर सूके तभी कमल कुम्हलायंगे।
हंस बटाऊ वीर तुरत उड जायगे॥
साहब अपनो सुमर विलम नहि कीजिये।
हरिहां वाजिन्द निहचै मरबो वीर कोटि जो जीजिये॥३॥

कहा गये भीष्म, भोज तपन्ते तेज रे
चँवर दुले लख चारि सिंहासन सेभ रे॥
मेडी मन्दिर महल करोडो लप रे।
हरिहां वे नृप गये मसाणा कहूं गई खेख रे॥ ४॥

टेढी पगडी बान्ध झरोखा झाकते।
ताता तुरंग पिलांणा चहुंटे डाकते॥
लीरे चढती फौज नगारा बाजते।
वाजिन्द वे नर गये बिलाय सिंह ज्यूं गाजते॥ ५॥

दो दो दीपक जोय सु मन्दिर पोढते।
नारी सेती नेह पलक नही छोडते॥

---

१ ताते = गर्म। २ खाख = भस्म, राख। ३ झरोखे = बरामदे। ४ झाँकते = देखते। ५ ताता = तेज। ६ तुरग = घोडा। ७ पिलाणा = काठी, जीन। ८ चहुटे = चारों ओर। ९ डाकते = कूदते, उलघते। १० लार = पीछे। ११ पोढते = सोते।

तैल फुलेल लगायक काया चामकी ।
हरिहां वाजिन्द मर्द गर्द मिलगये दुहाई रामकी ॥ ६ ॥

शिर पचरंगी पागक जामां जरकसी[1] ।
हाथों ढाल कमाण कमर में तरकसी[2] ॥
जो घर चंगी नार दिखावे आरसी ।
हरिहां वाजिद वे नर चले मसांण पढंता फारसी ॥ ७ ॥

ताता तुरी पलांण चहुंटे कूदणा ।
टेढी पाग झुकाय छांह को निरखणा ॥
रूप रंग अरु राग पवन ज्यूं वह गया ।
हरिहां वाजिन्द केता[3] करूं वर्षानक[4] वाडा रहगया ॥८॥

वार वार समझायहुं अन्धा चेतरे ।
कांकड[5] ऊभी फौज बुहारे खेतरे ॥
दारू गोला नाल[6] अरांवा[7] छूटसी ॥
हरिहां वाजिन्द कंचनवरणी देह पटाके[8] फूटसी ॥ ९ ॥

घडी घडी घडियाल पुकार्यो कहत है ।
आव गई सब बीत अलपसी रहत है ॥
सोवे कहां अचेत जाग जप पीव रे ।
हरिहां वाजिन्द चलणा आज कि काल वटाऊ जीवरे ॥ १० ॥

---

१ जरकसी = जरदोजी, जरीदार। २ तरकसी=तरकस। ३ केता = कितना। ४ वखान = प्रशंसा, कथन। ५ कांकड = सीमा पर। ६ नाल = तोप। ७ अरांवा = गुजरवे। ८ पटाके = तुरन्त।

भजले तोता रामकि बैठा ताकमे।[1]

यह दिन च्यार का रंग मिलेगा खाकमें ॥

सांई वेग समाल जमाँसू राडे है।[2]

हरि हां वाजिन्द जमके हाथ गिलोल पटीका पाडि है ॥ ११ ॥[3]

शिर पर लम्बा केस चले गज चालसी।

हाथ गह्यां शमसेर ढलकती ढालसी।[4]

एँता यह अभिमान कहो ठहरांयगे।[5]

हरि हां वाजिन्द ज्यूं तीतर कूं बाज झपट लेजांयगे ॥१५॥

रोहिडे सा फूल वनी में फूलिया।

झूठी माया मांहि भजन क्यूं भूलिया ॥

माया अर्थ लगाय पवनज्यूं बेषणा।

हरि हां वाजिन्द दुनियाँ में दिन च्यार तमाशा देखणां ॥ १३ ॥

पातशाह की सेझ पथरणा पाटका।[6]

हीरा जड्या जडावक पाया खाटका ॥[7]

हुरमां खडी हजूरि करत है वन्दगी।

हरि हां बिना भज्या भगवान पडेगा गंदगी ॥ १४ ॥

---

१ ताकमें = टोहमें, घातमें। २ राड = लडाई, युद्ध। ३ पटीका पाडि है = चाटे लगायेंगे। ४ ढलकती = लटकती। ५ एता = इतना। ६ पथरणा = बिछौना। ७ खाटका = पलग का।

दासी ऊभी बारक डोढ्यां[1] रावली[2] ।
पहन्यां दखणी चीर फिरत उतावली ॥
गहली कियो गुमानक गंदी देहको ।
हरिहां वाजिन्द नीर निवारायां गयोक पांणी मेहको ॥ १५ ॥

ऊंचा मन्दिर महलक नीचा मालिया ।
बैठि राजकुमारिक पडदा डालिया ॥
गल सोने का हंस[3] कानमें वालियां ।
हरिहां वाजिन्द करत पियासूं बातक दे दे तालियां ॥ १६ ॥

कारीगर कर्तारक हुन्दर[4] हद किया ।
दश दरवाजा राख शहर पैदा किया ॥
नख सिख महल बनायक दीपक जोडिया ।
हरिहां भीतर भरी भंगार[5]क ऊपर रंग दिया ॥ १७ ॥

फरहरते[6] नीसाण नगारा बाजते ।
आंण[7] फिरे चहुं ओर चले नर गाजते ।
हाथों दिया जु दान कह्या मुख राम रे ।
हरिहां वाजिन्द सो सुख नजन्यां देख भजन का कामरे ॥ १८

१ डोढ्या = दरवाजे । २ रावली = जनाने । ३ हंस = हंसली । ४ हुन्दर = इल्म, कारीगरी । ५ भंगार = कूडा । ६ फरहरते = फहराते । ७ आंण = दुहाई ।

मुख सूं कह्या न राम दिया नहि हाथ रे।
घर में नांही अन्न फिरें काढू साथ रे॥
दे दे माथे बोझ दूर कूं तांणियां[1]।
हरिहां वाजिद गिना भज्या भगवान अठै[2] ही जांणियां[3]॥१६

ये मोटा अमराव बडी सिरकार का॥
हाथा नीर कवांण भलाकां सारका॥
नौलख चढ़ते लार सवा लख सूर रे।
हरिहां सो नर मान्या काल होग गये धूर रे॥२०॥

लंगर लीया जायक नेजा फरहरे।
बाज रही करनाल नगारा घरहरे॥
परदेशी की प्रीति फूस का तापणा।
हरिहां वाजिद उठ चल्या अधरात कदे नही आवणा॥२१

हुये हैं राणे राव किते हो जायगे।
किते हुये पतिशाह कमाई खांयगे॥
किते फंसे गढ लेरु लुगाई ज्यान की॥
हरिहां वाजिद सप्तदीप नवखंड दुहाई राम की॥२२
तजि चेला पांच[4] पचीस[5] महन्तजी[6] रमगया।
तीसा मांस पांच कबीले मिलगया॥

---

१ ताणिया = भगाया, खींचा। २ अठै = यहीं। ३ जाणिया = देखा, पहिचाना। ४ पाच = पचभूत। ५ पचीस = पाचभूत की पचीस प्रकृति। ६ महन्तजी = चेतन।

आसण रही समूल गुलसफा भरथरी ।
हरिहां प्राणी पुरुष कुंड त्याग रमगयो दिगन्तरी[1] ॥२३॥

जल की उत्पति नीर तिनूंका तन किया ।
पींड्या जांघा जोड चलणाकूं पग दिया ॥
कड धड पांसू जोड अनामत[2] करलिया ।
हरिहां वा साहिब की प्रीति बिसर क्यूं भया ॥२४॥

भेटै पुण्य की रेखक दौडे पापने ।
साला न्योंत जिमाय धक्का दे बापने ॥
करे नारी की भीड[3] गालि दे बहन कूं ।
हरिहां वाजिद सो नर नरकां जाय और नहीं रहन कूं ॥२५

भूल्यो माया मोह मौत नहि सूझि है ।
सुत दारा धन धाम आप नहि बूझि है ॥
हरि का नाम अज्ञानन हिरदै आनही ।
हरिहां वाजिद दीया सो बूझ जाय भया ऐहू मान ही ॥२६

या कलि में वाजिन्द कहां काऊ रहन है ।
मनहुं बटेरी बाज पैचे[4] गहि[5] लहत है ॥
कुरलावे[6] ज्यूं कुंज सुने किन राज रे ।
हरिहां गैवर[7] गये गुडन्त[8] नहीं खुर खाज रे ॥ २७ ॥

---

१ दिगन्तरी = शून्य मे । २ अनामत = बराबर । ३ भीड = मदद । ४ पेंच = खींच । ५ गहि = पकड । ६ कुरलाव = चिल्लाना । ७ गैवर = हाथी । ८ गुडन्त = लुढकते ।

(काल को अंग)

काल फिरत है हाल रैंण दिन लोइ रे।
हनै राव अरु रंक गिणै नहि कोइ रे॥
यह दुनियां वाजिन्द बाट[1] की दूब है।
हरिहां पाणी पहिले पाल बन्धे तो खूब है॥ १॥

जुरा[2] बडा यह ख्याल रहे क्यूं जगमे।
वाजिन्द बटाऊ[3] लोग पनैंह[4] नही पगमे॥
राजा राणा राव छत्रपति लोय रे।
हरिहां जोगी जंगम शेष सभी दिन दोय रे॥ २॥

परे काल के जाल जीव किहि काम कू।
तज रे! माया मोह रटै किन राम कूं॥
माह मुदगेरा[5] हाथ साथ जमदूत है।
हरिहां भ्रात मात पितु बन्धु कौन को पूत है॥ ३॥

प्रगट बोले झूठ नेक[6] नहिं सरम रे।
माल मुलक वाजिन्द कोण की हुरम[7] रे॥
मरण माभ नहिं फेर जीवन की बात है।
हरिहां हाथी घोडे ऊंट कूट वहै जात है॥४॥

---

१ वाट = राह, मार्ग। २ जुरा = बुढापा। ३ वटाऊ = राहगीर।
४ पनह = पगरखी, जूती। ५ मुदगर = मोगरी। ६ नेक = थोडीसी।
७ हुरम = बेगम, रानी।

मैं कहियो वाजिन्द तोहि वरै[1] वीसरै ।
करि है खंड विहंड[2] हाथ पग सीसरै ॥
जुरा घड़ी वलाय न छाडे जीवकूं ।
हरिहां दूर जिन जाय पकड रह पीवकूं ॥ ५ ॥

सुकृत लीनो साथ पडी रहि मांतरा[3] ।
लाम्बा पांव पसार बिछाया सांथरा[4] ॥
लेय चल्या बनवास लगाई लाय रे ।
हरिहां वाजिन्द देखे सब परिवार अकेला जाय रे ॥ ६ ॥

(विश्वास का अंग)

हिरदै न राखो वीर कलपना कोय रे ।
राई घटे न मेर होय सो होय रे ॥
सप्त द्वीप नव खंड जोय किन ध्यावही ।
हरिहां लिख्यो कलम की कोर वो ही पुनि पावही ॥ १ ॥

जो कछु लिख्यो ललाट सोई परखाइये ।
काहे कूं वाजिन्द आन[5] कूं जाइये ॥
कूप मांहि भर लेह ताल[6] की तीर रे ।
हरिहां ठांव[7] प्रमाण[8] सहज आइ है नीर रे ॥ २ ॥

---

१ वर = दफे, बार । २ खंड विहंड = टुकड़े २ । ३ मांतरा = सम्पत्ति । ४ साथरा = संथारी, अरथी । ५ आन = दूसरा । ६ ताल = सरोवर । ७ ठांव = बरतन । ८ प्रमाण = अन्दाज ।

खोलि खजानों देह आपणो लोइ रे।
बुरो भलो वाजिन्द गिणो नहि कोइ रे॥
साहब के सब एक हंस कहा बग रे।
हरिहां लिये एक ही पाव जीव सब जग रे॥ ३॥

यदि तुझमे कुछ समझ पकड रह मन कू।
निपट[1] हि हरि को होय जांच मत जन कू॥
प्रीति सहित वाजिन्द राम मुख बोलही।
हरिहां रोटी लीयां हाथ नाथ संग डालही॥ ४॥

रिजकन[2] राषी राम सबन को पूरही।
काहे का वाजिन्द वृथा तू झूरही[3]॥
जन्म सफल कर लेयक गोविन्द गायके।
हरिहां जाको ताके पास रहेगा आयके॥ ५॥

काम कलपना वीर हृदय की धोय रे।
गहि कर पांच पचीस सुखारे[4] सोय रे॥
जल थल नभ के जीव स्याह हो श्वेत रे।
हरिहां वाजिन्द चोंच समाना चून सबन को देत रे॥६॥

विन मांग्या ही वीर सबै कुछ लहत है।
तूं काहे को दौड दुनी[5] सू कहत है॥

---

१ निपट = बिलकुल। २ रिजकन = रोजी, रोजगार। ३ झूरही = रोवे, सोच करे। ४ सुखारे = सुखसे। ५ दुनी = दुनिया।

देयं[1] कथन वाजिन्द बुरो है लोय रे।
हरिहां ! या मानस को धर्म रहे नहिं कोय रे ॥ ७॥

जहां रवि होत उदोत[2] तहां नहिं रहे तिमिर[3] वत्त।
वासर[4] भये व्यतीत तुरतही हाय निशा[5] भत्त ॥
धीर गहो उर वीर दुःख को करो न रचना।
हरिहां अपनी अपनी बेर सु नाटक[6] नचना ॥ ८ ॥

ज्यूं ग्रीष्म के अन्तसु वर्षा आत है।
वर्षा भये व्यतीत शीत मधु[7] रात है ॥
ऐसे ही सुख दु ख अनुक्रम[8] लेखि है।
हरिहां कब हूक दई[9] सुदृष्टि[10] हम हू पर देखि हैं ॥९॥

[कृपण को अंग]

भली बुरी क्यूं कहो न दमेंरी[11] देन है।
माया सूं वाजिन्द कृपण को हेत है ॥
पाहण को सो हियो किया है जिन रे।
हरिहां हरिजन आवो कोटि न रीझै मन रे ॥ १ ॥

---

१ देय = दे। २ उदोत = उदय, उगने पर। ३ तिमिर = अन्धेरा। ४ वासर = दिन। ५ निशा = रात। ६ नाटक नचना = खेल खेलना। ७ मधु रात = वसन्त की रात। ८ अनुक्रम = बारी बारी। ९ दई = देव, विधाता। १० सुदृष्टि = चोखीनजर। ११ दमरी = छदाम।

कृपण अपने हाथ न कोडी जाच ही।
जो पायन[1] घूंघर बांध विधाता नाच ही॥
हाड मुड के[2] मांहिन निकसे लोहि रे।
हरिहां ! दान पुराय वाजिन्द करे क्यूं सोइ रे॥ २॥

इत उत चले न चित्त नित्य ढिंग[3] रहत है।
दान पुराय की वातन मुख सू कहत है॥
छाती तल हरि धरी न दे कहुं सुपने।
हरिहां ! वाजिन्द पंखी मानो सेवत अन्डा अपने॥३॥

कहांलो खोदि कोई निपट ही दूर है।
या मानस को काम सु तो नहिं मूर है॥
बैठ गये बहु हार करहु जिन आस रे।
हरिहां ! वाजिन्द कृपण माया धरी जाय जल पास रे॥४॥

चूक्यो[4] भारी घांन दुहाई नाथ की।
विलै[6] न जासी वीर दई या हाथ की॥
पाहण को सो हियो कियो इन लोय रे।
हरिहां बिन बोये वाजिद लूणे कहा सोय रे॥ ५॥

मन राखत दिनरैन मुलक अरु माल में।
कृपण पड्यो वाजिद काल के गाल में॥

---

१ पायन = पैरो में। २ हाड मुडके = हाड चिगनेसे। ३ ढिंग = पास।
४ चूक्यो = चूकगया। ५ घात = मौका। ६ विलै = विलीन।

फिर फिर गाढ़ी गहे देख तूँ रंग रे।
हरिहां खाल हू लैहै खींच न जैहै संग रे ॥ ६ ॥

चौकी पहरा देत दिवस अरु रात है।
जल अंजलि को नीर ज्यूं तनहीं जात है ॥
हांडीमार के हाथ नहीं को छूट ही।
हरिहां वाजिद चोर जाय चमकाय किराना लूट ही ॥७

ज्यूं छी त्यूं ही कही सत्य सुन लोय रे।
मन गाढो करि रहे न मांगि है कोय रे ॥
कृपण अपने हाथ न कौड़ी देयगो।
हरिहां मणि है माथे सर्प मारि कोऊ लेयगो ॥ ८ ॥

या को योंही अर्थ जीव में जाणिये।
वाजिद दूसरी बात हृदय क्यूं आनिये ॥
मधु माखी मधु संच्यो दे न हंस खेल के।
हरिहां! ताकू बटाउ लेय धूर मुख मेलि के ॥६॥

(दातव्य को अंग)

भूखो दुर्बल देख मुंह नहि मोड़िये।
जो हरि सारी देय तो आधी तोडिये ॥

---

१ गाढी = मजबूत। २ गहे = पकडे। ३ तन = शरीर। ४ हांडीमार = काल। ५ संच्यो = संग्रह किया। ६ सारी = पूरी।

भी आधी की आध अध की कोर[1] रे।
हरिहां अन्न सरीखा पुराय नहीं कोई ओर रे ॥ १ ॥

दे कछु अपने हाथ नाथ के नाम रे।
सुफल सोई वाजिद चलेगो साथ रे ॥
दीज्यो नित ही वीर सुमर कर पीव कूं।
हरिहां आडो[2] वाकी वेर[3] आइ है जीव कूं ॥ २ ॥

खैर[4] सरीखी[5] ओर न दूजी वसत[6] है।
मेल्हे[7] वासण[8] मांहि कहा मुंह कसत[9] है ॥
तूं अन जानें जाप रहेगो ठाम[10] रे।
हरिहां माया दे वाजिद धणी के काम रे ॥ ३ ॥

मंगणा[11] आवत देख रहे मुंह गोयं[12] रे।
जदपि है बहु दाम काम नहि लोय रे ॥
भूखे भोजन दियो न नागा[13] कापरां।
हरिहां बिन दीया वाजिद पावे कहा बापरा ॥ ४ ॥

---

१ कोर = किनारा, टुकडा। २ आडो = काम। ३ वाकीवेर = कठिन समय। ४ खैर = दान, खैरात। ५ सरीखी = समान। ६ वसत = वस्तु, चीज। ७ मेल्हे = धरे। ८ वासण = वर्त्तन। ९ कसत = बाधता। १० ठाम = जगह। ११ मगण = याचक, मागने वाला। १२ गोय = छिपा। १३ नागा = उघाडा, वस्त्रहीन।

(दया को अंग)

जल में भीणा जीव थाह नहि काय रे।
विन छांण्या जल पियां पाप बहु होय रे॥
काठे कपडे छाण नीर को पीजिये॥
हरिहां वाजिद जीवाणी जल मांहि जुगत सूं कीजिये॥१॥

बुरे भले को न्याव कसाई मांगसी।
पग में रसडी डारि ऊंधे मुख टांगसी॥
माकम देसी मार आंख भर लोनसो।
हरिहां है मिजमान दिन च्यार विगार कोनसो॥ २॥

साहिब के दरबार पुकार्‍यां बाकरा।
काजी लीयां जाय कमरसां पाकरा॥
मेरा लीया सीस उसी का लीजिये।
हरिहां वाजिन्द राव रंक का न्याव बराबर कीजिये॥३॥

(अज्ञान को अंग)

कहा करे उपदेश अज्ञानी जीव कूं।
भई जनम की भूल जपे किन पीव कूं॥

---

१ भीणा = महीन, सूक्ष्म। २ थाह = अन्त। ३ काठे = गाढे। ४ जीवाणी = छाने हुए पानी के जीव। ५ मांगसी = मांगेगा। ६ रसडी = रस्सी। ७ टांगसी = टांगेगा। ८ माकम = खूब। ९ बाकरा = बकरा। १० पाकरा = पकडा।

सृष्टि भली न वाजिन्द दुहाई राम की।
हरिहा अन्धे आरसि दई कहा किहि काम की ॥ १ ॥

प्रमोदत भई सांझ तोहि या जन कूं।
देखो सोच विचार रही को मन कूं ॥
वाजिन्द वस्तु अमोल वृथा क्यूं खोइये।
हरिहां कागा होय न हंस दूध सों धोइये ॥ २ ॥

जहां जगत की झूंठ तहां मुख देत है।
मनमें न आवत ज्ञान विषय सूं हेत है ॥
नख सिख कोरो मूढ अवहु कछु जोय रे।
हरिहां काग ही कहा कपूर खुवावे कोय रे ॥ ३ ॥

काहे का वाजिन्द सीख काहु दीजिये।
कारज सरै न कोई कैसे ही कीजिये ॥
कानों अंगुलि मेल्ल पुकारे दास रे।
हरिहां दूर न होई सूर विषय की वास रे ॥ ४ ॥

अब क्यूं आवै हाथ गयो जो मूल को।
पुत्र कलत्र धन धाम ध्यान है धूल को ॥

---

१ दुहाई = आन। २ आरसी = दर्पण। ३ प्रमोदत = उपदेश दे। ४ साझ = सन्ध्या = । ५ हेत = प्यार। ६ सीख = उपदेश। ७ कारज = काम। ८ मेल = धर।

कोटि कहो किन कोय एक नहि बूझि[1] है।
हरिहां घू घू आन्धा धोसे[2] रात को सूझि है ॥ ५ ॥

पाहन[3] पड गई रेख रात दिन धोवहीं।
छाले पड गये हाथ मूंड[4] गहि रोवही ॥
जाको जोई सुभाव जाइ है जीव सूं।
हरिहां नीम न मीठा होय सींच गुड घीव सूं ॥ ६ ॥

'उपजण को अंग'

यह तो मेरी सीख कान किन कीजिये।
राम नाम सी सौंज वृथा क्यूं दीजिये ॥
अमृत फल वाजिन्द पचे नहि रांडको।
हरिहां कूकर को जु स्वभाव गहेगो हाडको ॥ ७ ॥

जो कुछ सुरता[5] होय तहां कुछ बोलिये।
बिन गाहक वाजिन्द वस्तु नहि खोलिये ॥
जाणो सकल जहान प्रत्यक[6] है मूलकी।
हरिहां ! बल धन जांणे वास भया वा फूलकी ॥ ८ ॥

पाहण[7] कोरो[8] रह्यो बरसता मेह में।
घात घणी वाजिद दुष्टता[9] देह में ।

---

१ बुझिहै = समझते। २ धोस = दिन में। ३ पाहन = पत्थर। ४ मूंड = शिर। ५ सुरता = ध्यान, चाह। ६ प्रत्यक = प्रत्यक्ष, सामने। ७ पाहण = पत्थर। ८ कोरो = सूका। ९ दुष्टता = बुराई।

डसे[1] अचानक आय मूंड गहि रोइये।
हरिहां सर्प ही दूध पिलायक व्यर्था खोइये ॥ ३ ॥

तकतक[2] वाहे तीर किते या जन कूं।
वृथा गुमाये वांण लगे नहिं मन कूं ॥
फूटे वांसण[3] रान नैन नहिं जोवहीं।
हरिहां वाजिद टकैट्टांक[4] को वीर वचन क्यूं खोवहीं ॥४

ऊसर भूमि देख बीज नहिं बोइये।
मूर्ख को समझाय ज्ञान नहि खोइये ॥
ज्ञान वृथा ही जाय नही वो मानि है।
हरिहा मूर्ख समझे नही पाप की खानि है ॥ ५ ॥

(जरणा को अंग)

सतगुरु शरणें आयक[5] तामस त्यागिये।
बुरी भली कह जाय ऊठ नहि लागिये ॥
उठ लाग्या में राड[6] राड में मीच[7] है ।
हरिहां जा घर प्रगटै क्रोध सोही घर नीच है ॥ १ ॥

कहि कहि वचन कठोर खरूंठ नहिं छोलिये।
शीतल शान्त स्वभाव सबन सूं बोलिये ॥

---

१ डसे = खाय । २ तकतक = निशानेसे । ३ वासण = वर्तन । ४ टकैटाक = बहुमूल्य । ५ आयक = आकर । ६ राड = लड़ाई । ७ मीच = मृत्यु ।

आपन शीतल होय और भी कीजिये।
हरिहां बलती में सुण मीत न पूला दीजिये ॥ २ ॥

(साच को अंग)

यह हरि मथुरा मांही वही है द्वारिका।
पूर रह्या भर पूर प्रेम की पारिखा[1] ॥
राख्यो है प्रहलाद क मारयो बाप[2] रे।
हरिहां वाजिद तू मति जाणे और निरंजन आप रे ॥१

(भेष का अंग)

बडा भया तो कहा बरस सो साठ का।
घणा पढ्या तो कहा चतुर्विध[3] पाठ का ॥
छापा तिलक बनाय कमंडल काठ का।
हरिहां वाजिन्द एक न आया हाथ पंसेरी आठ का ॥१॥

पोथी नाना खोल पसारा[4] मांडिया।
समझे नहीं विवेक[5] भेख ले भांडिया[6] ॥
कहै करै कछु ओरक भरवा[7] पेटका।
हरिहां महाअज्ञानी जीवक पापी ठेठ[8] का ॥२॥

॥ इति वाजिदजी की अरिल समाप्त ॥

---

१ पारिखा = परीक्षा। २ बाप = पिता। ३ चतुर्विध = चारोंवेद, चार प्रकार। ४ पसारा = फैलावा, विस्तार। ५ विवेक = यथार्थज्ञान। ६ भांडिया = बदनाम किया। ७ भरवा = भरने वाला। ८ ठेठका = आरंभसे, शुरूका।

आरती समुच्चय ग्रन्थ

दयाल जी की आरती:-

[१]

इहिं विधि आरती रामकी कीजै आतमा अन्तर वारणा लीजै।टेक।
तन मन चन्दन प्रेमकी माला, अनहद घंटा दीन दयाला ॥ १ ॥
ज्ञान का दीपक पवन की बाती, देव निरंजन पाचों पाती ॥ २ ॥
आनन्द मंगल भाव की सेवा, मनसा मन्दिर आतम देवा ॥ ३ ॥
भक्ति निरन्तर मैं वलिहारी, दादू न जानै सेवा तुम्हारी ॥ ४ ॥

[२]

आरती जगजीवन तेरी, तेरे चरण कमल पर वारी फेरी ॥ टेक ॥
चित चावर हेत हरि ढारै, दीपक ज्ञान ज्योति विचारै ॥ १ ॥
घंटा शब्द अनाहद बाजै, आनन्द आरती गगन गाजै ॥ २ ॥
धूप ध्यान हरि सेती कीजै, पुहप प्रीति हरि भाँवरि लीजै ॥ ३ ॥
सेवा सार आतम पूजा, देव निरञ्जन और न दूजा ॥ ४ ॥
भाव भक्ति सूं आरती कीजै, इहिं विधि दादू जुग जुग जीजै ॥ ५ ॥

[३]

अविचल आरती देव तुम्हारी, जुग जुग जीवन राम हमारी।टेक।
मरण मीच जम कालन लागै, आवागवन सकल भ्रम भागै ॥ १ ॥

जोनी जीव जन्म नहिं आवै, निर्भै नाम अमर पद पावै ॥ २ ॥
कलिविष कुसमल बंधन कांपै, पार पहूंचै थिरकरि थापै ॥ ३ ॥
अनेक उधारे तैं जन तारे, दादू आरती नरक निवारे ॥ ४ ॥

[४]

निराकार तेरी आरती, अनन्त भुवन के राइ ॥ टेक ॥
सुरनर सब सेवा करैं, ब्रह्मा विष्णु महेश ॥
देव तुम्हारा भेव न जानै, पार न पावे शेष ॥ १ ॥
चन्द सूर आरती करैं, नमो निरंजन देव ।
धरती पवन आकाश आराधैं; सबै तुम्हारी सेव ॥ २ ॥
सकल भवन सेवा करैं, मुनियर सिद्ध समाध ।
दीन लीन ह्वै रहैं सन्त जन अविगति के आराध ॥ ३ ॥
जै जै जीवन राम हमारी भक्ति करैं ल्यौ लाय ।
निराकार की आरती कीजे जन दादू बलि बलि जाय ॥ ४ ॥

[५]

तेरी आरती ए! जुग जुग जै जै कार ॥ टेक ॥
जुग जुग आतम राम जुग जुग सेवा कीजिये ॥ १ ॥
जुग जुग लंघै पार जुग जुग जगपति कों मिलै ॥ २ ॥
जुग जुग तारनहार, जुग जुग दरसन देखिये ॥ ३ ॥
जुग जुग मंगलचार, जुग जुग दादू गाइये ॥ ४ ॥

अथ कबीर जी की आरती –

[१]

ऐसी आरती त्रिभुवन तारे तेज पुंज तहां प्राण उतारे ॥ टेक ॥
पाती पंच पुहुप करि पूजा, देव निरञ्जन और न दूजा ॥ १ ॥
तन मन शीश समर्पण कीन्हा, प्रगट जोति तहां आतम लीन्हां ॥२॥
दीपक ज्ञान सबद धुनि घंटा, परम पुरष तहां देव अनन्ता ॥ ३ ॥
परम प्रकाश सकल उजियारा, कहै कबीरा दास तुम्हारा ॥ ४ ॥

[२]

गोपालराइ नें आरती ए, करैं सन्त ल्यो लाय ॥ टेक ॥
मन करि घृत काया करि थाली, ब्रह्म ज्ञान करि बाति ।
पंच तत ले दीपक जोया, चले अखंड दिन राति ॥ १ ॥
चित स चन्दन ध्यान सु गंधन, अनहद घंट- बजाई ।
अजपा धुनि भाव धरि भोजन, मनसा भोग लगाई ॥ २ ॥
चवरस पवनं अखित गवनं, नवका पारि लगाइ ।
भीतर द्वारि पूजि परमेश्वर, आतम पुहुप चढाइ ॥ ३ ॥
संख मृदंग गहर धुनि उपजै, अनहद बाजै बीन ।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर नारद, सकल साध ल्यौलीन ॥ ४ ॥
काल निकन्दन सुरनर मंडन, सन्तनि प्राण अधार ।
कहै कबीर भगति इक मागौं, आवागमन निवार ॥ ५ ॥

[३]

रामनिरञ्जन आरती तेरी,

अविगत गति जाणी नहीं आवे, क्यूं मति पहुंचै मेरी ॥ टेक ॥

निराकार निर्लेप निरञ्जन, गुण अतीत तूं देवा ।
ज्ञान ध्यान थैं रहै नियारा, जाणी जाइ न सेवा ॥ १ ॥

सनक सनन्दन नारद मुनि ज्ञानी, सेस पार नहीं पावै ।
संकर ध्यान धरै निस बासुरि, अजहूं ताहि भुलावै ॥ २ ॥

सब सुमरत अपने उनमाना, ता गति लखीन जाई ।
कहै कबीर कृपा कर जन कूं, ज्यूं है त्यूं समझाई ॥ ३ ॥

[४]

तेरी आरती हो, अलख निरञ्जन राइ
करि मन गगन मंडल में जाइ ॥ टेक ॥

चेतन कूंची अचेतन ताला, संका सत्रै झड़ाइ ।
सेवक स्वामी रहै सनमुखा, भरम का पाट धिकाइ ॥ १ ॥

प्रेम घृत अभरा भरि थाली. बाती विरह लगाइ ।
सकल भुवन में हो उजियारा, पांच पतंग जरि जाई ॥ २ ॥

ताल मृदंग झांझ डफ बाजै, दीरघ घंटा नाद ।
दास कबीर परम पद पैहै, मांगै अरु परसाद ॥ ३ ॥

[५]

नूर की आरती नूर के आगे, नूर के ताल पखावज बाजे ॥ टेक ॥
नूर के गाइन नूर को गावैं, नूर सुणयाते बहुरिन आवैं ॥ १ ॥
नूर की बाणी बोलैं नूर, नूर झिलि मिलि दीसैं सदा हुजूर ॥२॥
नूर की आत्मा संगि नूर विराजे, नूर का दीपक नूरके छाजे ॥३॥
नूर कबीरा नूर को गावै, नूर की आरती नूर को भावे ॥ ४ ॥

[६]

तेज की आरती तेज सुनावे,
तेज ही झिलिमिलि तेज ही थावै ॥ टेक ॥
तेज पखावज तेज ही बावै, तेज ही नाचै तेज ही गावै ॥ १ ॥
तेज की थाली तेज की बाती, तेज की आरती तेज की थाती ॥२॥
तेज उजाला तेज ही देखै, तेज ही दरवै तेज ही पेखै ॥ ३ ॥
तेज के आगे तेज विराजे,
तेज कबीरा आरती गावै तेज के काजै ॥ ४ ॥

नामदेव जी की आरती.—

[१]

कहा ले आरती दास करै, सकल भुवन जाकी जोति फिरै ॥ टेक ॥
सात समुद जाके चरन निवासा, कहा भयो जल कुम्भ भरै ॥ १ ॥
कोटि भान जाके नष की सोभा, कहा भयो कर दीप फिरै ॥ २ ॥

अनन्त कोटि जाके बाजे बाजैं, कहा घंटा झणाकार करै ॥ ३ ॥
अठारह भार जाके वनमाला, कहा भयो कर पुहुप धरै ॥ ४ ॥
चौरासी लष व्यापक रामा, केवल हरि जस गावै नामा ॥ ५ ॥

[२]

आरती पतिदेव मुरारी, चंवर ढुलै बलि जाऊं तुम्हारी ॥ टेक ॥
चहुं जुग आरती चहुं जुग पूजा, चहुं जुग राम अवर नहीं दूजा ॥१॥
आरती कीजै असैं तैसं, ध्रू प्रहलाद करी सुष जैसैं ॥ २ ॥
आनन्द आरती आतम पूजा, नामदेव भणै मेरे देवन दूजा ॥ ३ ॥

[३]

जहा देखौं तहां नरहरि नरहरि,
तेरी आरती गाऊं देवपति हरि हरि ॥ टेक ॥
नरहरि कहतां नरहरि पार उतारै,
आरती करै जन छिनन विसारै ॥ १ ॥
नरहरि मीठा नामां आरती गावै, अनन्त भवन में जै जै थावै ॥२॥

रैदासजी की आरतीः—

—: १ :—

आरती कपा ले करि जोवै, सेवगदास अचंभै होवै ॥टेक॥
बाषन कंचन दीर घड़ावै, जड़ि वैरागर दृष्टि न आवैं ॥१॥
कोटि भान जाकी सोभा रोमैं, कहा आरती अवनिर धामैं ॥२॥
पांच तत यहु त्रि गुनी माया, जो दीसै सो सकल उपाया ॥३॥
कहै रैदास मैं देष्या मांहीं, सकल जोति रोम सम नांही ॥४॥

—: २ :—

सन्त उतारैं आरती, देव सिरोमणि ए ॥
उर अन्तर तहा पैसि, बिन रसना भनिये ॥टेक॥
मनसा मन्दिर मांहि, धूप धूपाइये ॥
प्रेम प्रीति की माल, राम चढाइये ॥ १ ॥
चहुंदिस दिवला वालि, जगमग व्है रह्यो ए ॥
तन मन आतम वारि, तहा हरि गाइये ॥
भणत जन रैदास, तुम्ह सरणाइये ॥ २ ॥

—: ३ :—

नाम तेरो आरती मंजन मुरारे, हरि के नाव बिन झूठ सकल पसारे॥टे०॥
नाम तेरो आसण नाम तेरो उरसा, नाम तेरो केसरि ले छिटकारे।
नाम तेरो अंभुला नाम तेरो चंदन, घसिजपैनाम ले तुझही को चारे ॥१॥
नाम तेरो दीवला, नाम तेरो बाती, नाम तेरो तेलु लै माहि पसारे।
नाम तेरे की जोति लगाई, भयो उजियारो भवन सगला रे ॥२॥
नाम तेरो तागा नाम फूलमाला, भार अठारह सकल झूठारे।
तेरो कियो तुझही को अरपौं, नाम तेरा तुझही चंवर दुलारे ॥३॥
दस अठ अठसठ चोर पाणी, इहै बरतणि है सकल संसारे।
कहै रैदास नाम तेरो आरति, सति नाम है हरि भोग तुहारे ॥४॥

सूरदासजी की आरती:—

— १ :—

किहिं विधि आरती राम की गाऊं, परब्रह्म को पार न पाऊं॥टे०॥
राम कहै तो आरती लागी, आपा बोलै तो सब काची ॥१॥

लोक दिखाई जीवन धीजै. भोग लगाइर पाछो लीजै ॥२॥
वाहर जोति धाम उजाजी, अन्तरि आंधा क्यूं पग टालो ॥३॥
कहै हरदास किसी परिपाटी, दीवा वाती कूकर चाटी ॥४॥

सैनजी की आरती:—

[१]

मंगला हरि मंगला, नित मंगला राजा राम राइ कौं ॥ टेक ॥
धूप दीप गृह साजि आरती, वारणे जाऊं कंवलापति ॥ १ ॥
उत्तम दिवला निर्मल वाती, तुही निरञ्जन कंवलापति ॥ २ ॥
राम भगति रामानंद जाणै, पूरण परमानंद वषाणै ॥ ३ ॥
मदन मूरति भौतारि गोविंद, सैन भणै भजि परमानन्द ॥ ४ ॥

नानकजी की आरती—

[१)

गगन में थालु रवि चंद्रु दीपक वने, तारिका मंडल जनक मोती ।टेक
धूप मलआनलो पवनु चंवरो करै, सकलवनराइ फूलंत जोती ।१।
कैसी आरती होइ भव खंडनां तेरी, अनाहदा सबद वाजंत भेरी ।
सहस तव नैनन नन है तोहि कौं सहस मूरतिन ना एक तोही ॥
सहंस पद विमल नन एक पद गंध विन सहस तव गंध इव
चलत मोही ॥ २ ॥
सभि महि जोति जोति है सोई. तिसदे चांदणि सभ महि चांदणहोई
गुर साखी जोति प्रगटु होई. जोति सु भावै सो आरती होई ॥३॥
हरि के चरण कमल मकरंद, लोभित मनों अन दिनों मोही आही
पियासा कृपा जलु देहि नानक सारंग कौं होई, जाते तेरे नाई
वासा ॥ ४ ॥ १ ॥

(२)

सो दरु केहा सो घरु केहा, जितु बहि सभ संमाले ।

वाजे नाद अनेक असंखा, केते वावणहारे ॥

केते राग परीसौं कहियनि, केते गावणहारे ।

गांवहि तुहनो पौणा पाणी, बैसंतरु गावैं राजा धर्म दुवारे ॥

गांवैं चित्र गुपत लिखि जाणा हि, लिखि लिखि धर्म विचारे ।

गांवै ईश्वर ब्रह्मा देवी सोहनि सदा संवारे ॥

गावै इंद इन्द्रासणि बैठे, देव तिया दरि नाले ।

गांवैहि सिधसमाधी अंदर, गावैहि साध विचारे

गावहि जती सती सतोखो, गावै बीर करारे ॥

गावैहि पंडित पढ निरखोसरं जुगि जुगि वेदा नाले ।

गावहि मोहणिया मन मोहनि सुरंगा मछ पयाले ।

गांवहि रतन उपाये तेरे

अठ सठि तीर्थ नाले ।

गावहि जोध महा बलि सूरा, गावही खाणी चारे ।

गांवही खंड मंडल ब्रहमण्डा, करि करि रखे धारे ॥

सेई तुधनों गांवही जो तुध भावही रते तेरे ।

भगत रसाले होर केते गांवहि

सेमैं चितिन आवही नानकु क्या विचारे ।

सोई सोई सदा सचु साहिबु, साचा साची नाई ।

है भी होसी जाइ न जासी, रचना जिनि रचाई ।

रंगी रंगी भाती करि करि जिनसी माया जिनि उपाई ।

करि करि वेष कीता अपणा· ज्यूं तिसदी वडियाई।
जोतिसु भावै सोई करसी, हूं कमुन करणां जाई।
सो पति साह साहीपनि साहिबु· नानक रहणा रजाई॥ १॥

कान्हाजी की आरती :—

[१]

आरती करौं राम जस गाऊं,मेरे हिरदे आनंद राम वलि जाऊं॥टेक॥
तीन लोक जाके वसि सो सकल जिया प्रतिपाल।
जाकी घटि घटि जोति प्रकास ले,बनी तेरी आरती दीन दयाल॥१॥
जाका वेद ही अन्त न पाया, सो प्रभु नग्र अतीत अपार।
परम जोति परसोत्तमां कान्हैं प्रांगा अधार॥ २॥

सूरदासजी की आरती :—

[१]

अति विचित्र रचना रुचि जाकी,
प्रभुजी की आरती बनी. परत निरागनी॥ टेक॥
कच्छिय जन आसन अनूप, अति डाडी सेप फनी।
धीप सरा व सप्तसागर घृत, बाती तैल बनी॥
रवि ससि जोति सकल परिपुरण, हरन तिमिर रजनी।
उडन फुलिंग अमल उडगनि मानो अंजन घटा बनी॥१॥
स्यो सुकादि सनकादि रजापति. सुर नर असुर अनी।
जाके उदित नाचत नाना विधि. गति अपनी अपनी॥२॥
काल कर्म अरु गुन सम ततके, प्रभु इच्छया जानीं।
मूरदास प्रभु कृतम धान में. अति अद्दप सजि प्रानीं॥३॥

टीलाजी की आरती —

[१]

आरती करि हरि की मनां, सुफल होहिं ज्यूं थारा दिना ॥ टेक ॥
सुरति सदा ले सनमुष कीजै, ता मेती अमृत रस पीजै ॥ १ ॥
प्राण मगन हरि आगे नाचे, काल विकाल सबै ही बांचे ॥ २ ॥
नष सिष सौंज सबै ही वारै तब ही देखत राम उधारै ॥ ३ ॥
गुरु दादू यहु मति सिषावैं, टीला के कै होइ न आवैं ॥ ३ ॥

[२]

विनती हरी तुम्ह सौं मेरी, कृपा करौ हूं वारी फेरी ॥ टेक ॥
तन मन चित हरि तुम्ह सौं लावौ, महा परम सुख नैन दिषावौ॥१॥
रहौं निकटि सोई विधि कीजै, देषि देषि अमृत रस पीजै ॥२॥
भाव भगति रहै तुम्ह नेरा, चरण कवल तलि देहु बसेरा ॥३॥
गुर दादू कृपा थैं जीजे, टीलानैं हरि इतनौं दीजै ॥ ४ ॥

दूजणदासजी की आरती —

[१]

आरती गुरु दादू है तेरी, है मोहि प्यास दरस तुम्ह केरी ॥टेक॥
तुम्ह ही तैसे दिषावहु नैनां, निरषि निरषि गुन गाऊं बेना ॥१॥
दीन दयाल दरस नित दीजै, तन मन प्राण सुफल करि लीजै ॥२॥
तुम्ह गति सतगुरु जाइ न जाणी, देहु दरस सुष पावै प्राणी ॥३॥
गुरु दादू अरदास सुणीजे, जन दूजन को दरसन दीजै ॥४॥

[२]

आरती उर अंतर कीजै, तन मन प्राण चरण चित दीजै ॥टेक॥
बाहरि दीसै लोक पसारा, अभि अंतरि निरगुण निरधारा ॥१॥

अन्तरगति आरती करि लीजै मन मनसा हरि अरपण कीजै ॥२॥
यों आरती करि साध समाना, जन दूजन भजि परम निधाना ॥३॥

बनवारीदासजी की आरती:...

[१]

ररंकार गुर सबद सुणाया, ताकी आरती करि मन भाया ॥टेक॥
जे आपा मेटि गरीबी कीजै. गुरकी आरती करि ज्यूं मरै न छीजै ॥१॥
ब्रह्मा विष्णु महादेव पांच की आरती गाई, और दुनी सब धंधै लाई॥२॥
धर्मराइ डरता आरती गावै. हरिका हुकम न मेट्या जावै ॥३॥
गुर दादू चेला बनवारी. आरती करता मिले मुरारी ॥ ४ ॥ १ ॥

[२]

गुरु गोविंद की आरती गाऊं, और सब सन्तनि को माथौ नाऊं॥टे.॥
देपि देपि दादू आरती गाई. ऐसी सांई सूं ल्योलाई ॥ १ ॥
परचै कबीर हरि गुण गाया, ताथै साहिब निकटि बुलाया॥ २ ॥
नामा रैदास नांउं मूं राता, पट दरसन के निकटिन जाता ॥ ३ ॥
धनां सैन भगति निज कीन्हीं, अन्तरजामी लीन्हो चीन्हीं ॥ ४ ॥
पीपे सोझै हरदासे गायो. बोलगराम दरसन दत पायो ॥ ५ ॥
गोरप भरथरी निज तत गहिया, हरि२ करतां अविचल रहिया ॥६॥
सकल साध मांगैं हरि दीदार, जुगि जुगि आरती करैं कै बार ॥७॥
गुर दादू यहु आज्ञा दीन्ही, तो बनवारी हरी कीरति कीन्ही ॥२॥

(३)

बीनती करो पीव आरती गांऊं, गुरके सबदों परम पद पाऊं ॥टे०॥
मुत अपराधी तो मैं तेरा. गुर की आरती करो बुलाऊं नेरा ॥ १॥

घट का दीया जीव की बाती, गुरु की आरती करा दिन राती ॥२॥
आरती गाऊं होइ लै लीना, गुर दादू यहु हरि धन दीन्हा ॥ ३ ॥
बनवारी या आरती गाई, गुरु चरणों रह्या ल्यो लाई ॥ ४ ॥

मोहनदासजी की आरती :—

[१]

आरती हरि गुर की कीजे, मन चित लाइ सुधा रस पीजे ॥टेक॥
प्रेम प्रीति हिरदै हरि वासै, कृपा तुम्हारी सब अघ नासै ॥ १ ॥
भाव सहित हरि भगति तुम्हारी, सदा सजीवन देहु मुरारी ॥ २ ॥
विषै विकार निकटि नहीं आवै, आत्म उमंगि राम गुन गावै ॥ ३ ॥
आत्मलीन सुरति जपि जागै, गुरु दादू पै मोहन मागै ॥ ४ ॥

जनगोपालजी की आरती —

[१]

अविगति आरती मैं का जानूं, तुम अपार मैं पार बखानूं ॥ टेक ॥
धरनी गगन सायर जल जाकै, भंजन भरे सरै क्यूं ताकै ॥ १ ॥
जाकी जोति सकल उजियारा, ताकूं दीपक कहा विचारा ॥२ ॥
तुम्ह जु विसंभर पारन पाऊं, तुम कौं भोग कहा ले लाऊं ॥ ४ ॥
ब्रह्मा शेष महेस भुलांनें, जनगोपाल किसी विधि जानै ॥ ४ ॥

[२]

आरती आतम देव अनंता, बहु विधि संत करै भगवंता ॥ टेक ॥
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर ध्यावैं, दरसन देहु सेव फल पावै ॥ १ ॥
नारद ध्रू ध्रुव जन प्रहलादा, साधिक सिध देव मुनि साधा ॥२॥

नाम कबीर करै रैदासा, पीपा जन दादू हरि पासा ॥ ३ ॥
आरती अगम अनंत अपारा, जनगोपाल न लहै विचारा ॥ ४ ॥

[३]

आरती करत सुर नर सकल उधरे,
गुर के प्रसाद जपत जन हरि हरे ॥टेक॥
आरती दुसह दुख दास नासन किये,
आरती करत जन अमर जुगि २ जीये ॥ १ ॥
भावसों भगति करि तजौं पदचारी,
जनगोपाल मिलै सुषकारी ॥ २ ॥

षखनाजी की आरती

[१]

करि आरती आत्मां उजली, रामजी पधार्‌यो मारे पुरवन रली ॥ टेक
तेतीस समाना उपरि चाढी, द्वारे ऊभी इक पग ठाढी ॥ १ ॥
पांच सबद घंटा निरवाणी, झालरि बाजे रामनाम वाणी ॥ २ ॥
पांच तत को दीपक धार्‌यो, जोति सरूपि ऊपरि वार्‌यो ॥ ३ ॥
दसवें द्वारे देव मुरारी, सनमुष सुंदरी पूजन हारि ॥ ४ ॥
मन पंडो तिहि सेवा मांही, षषना वारे आवै नांही ॥ ५ ॥

जैमलजी की आरती

[१]

राम की आरती क्या ले करिये, सकल धरा आगे का धरिये ॥ टेक ॥
सायर नीर अनंत जल जाके, भवन अनेक अनत अनपाके ॥ १ ॥

रवि ससि तेज अनंत उजियाला. काले मिलिये शक्ल तुम्हारा ॥ २ ॥
अनेक अठ सिधि नौ निधि जाके, भये अनंत जुग देत न थाके ॥ ३ ॥
जैमल तनमन आत्म वारी, का जांगौं आरती तुम्हारी ॥ ४ ॥

[२]

आरती मनमोहन तेरी, तुम परि वारौं मनसा मेरी ॥ टेक ॥
कवल कलस दिल प्रेमका पाणी, घंटा सबद बाजेइक बाणी ॥ १ ॥
चित चंदन माला मन कीजे, परम पुरिष तहां सरबस दीजे ॥ २ ॥
दया करि दीपक बुधि की बाती आरती कीजे दिन अरु राती ॥ ३ ॥
हरिके चरण हरण दुषदारण, सब संतन के कारिज सारन ॥ ४ ॥
संत अनंत अभै करलीन्हा, पहुंचे पार अभै पद दीन्हा ॥ ५ ॥
आरती करता होइ अनंदा, परम पुरिष मिले हो परमानंदा ॥ ६ ॥
बसै निरंतर मोहन राई, आरती करत अपै निधि पाई ॥ ७ ॥
गुरु प्रसादि आरती गाऊ, भगती दांन क्यूं ही जैमल पाऊं ॥ ८ ॥

[२]

आरती विषम कौन पै होई, रामकृपा जन पावै सोई ॥ टेक ॥
जुगि जुगि ब्रह्मा आरती गाई, सो न तुम्हारे मनमें आई ॥ १ ॥
आरती कीन्ही इद्र अनंता, सो नहीं मानी है भगवंता ॥ २ ॥
दस औतार आरती ध्यानी, रंचक बात विष्णु की मानी ॥ ३ ॥
बिषे बिलंबे माया न डारी, ताथे आरती वही बिचारी ॥ ४ ॥
मन मनसा माया जिनि डारी जैमल कहै आरती प्यारी ॥ ५ ॥

जगजीवनदासजी की आरती

[१]

गुरु गोविंद की आरती कीजै, भावसौं भगति प्रेमरस पीजै ॥ टेक ॥
तेज का दीवा तेज की वाती, तेज की आत्मा तेजसौं राती ॥ १ ॥
तेज के ताल मृदंग तहां वाजै, तेज के नाद धुनि तेज में गाजै ॥ २ ॥
तेज की सौंज सब तेय के आगै, तेज के संत जन तेज सौं लागै ॥ ३ ॥
तेज का दादू तेज घरि जांणीं, जगजीवन कहै तेज की वाणी ॥ ४ ॥

[२]

आरती रांम निरंजन भावै, तेतीसौं मिलि मंगल गावै ॥ टेक ॥
चित करि थाली जोति जीव आगै, सबद अनाहद झालरि वाजै ॥ १ ॥
घंटा नाद प्रेम रस वाणी, अविगति की गति जाइ न जांणी ॥ २ ॥
घटमें अनंत बजावैं वाजा, सत गुरु सेईं सरैं सब काजा ॥ ३ ॥
जस उनमान भाव अंग आगै जगजीवन जन चरनौं लागै ॥ ४ ॥

(३)

आरती राजाराम तुम्हारी, सकल भवन पति देव मुरारी ॥ टेक ॥
भावसौं आरती सहज सुख कीजै, कोटि धारा नीर अमृत पीजै ॥ १ ॥
असंष दीपक जोति उजियाला, का सोभा करौं वरन गोपाला ॥ २ ॥
असंष सूरज जगमगै जोती, स्वाति सीतल झरै निज मोती ॥ ३ ॥
ऐसे आरती सदा तहां होई, जगजीवनदास तहां आप है सोई ॥ ४ ॥

गरीबदासजी की आरती

[१]

राम निरंजन आरती तेरी, सकल भवन पति जीवनि मेरी ॥ टेक ॥

ब्रह्मा विष्णु महेश्वर देवा, स्वर तेतीस करैं तेरी सेवा ॥१॥
सेसर, नारद धू प्रहलादा, जै जैकार करैं सब साधा ॥२॥
दत, गोरष, हणवंत, सुषदेवा, बहुत भांति करैं तेरी सेवा ॥३॥
जलंधी भरथरी, गोपी चंदा, मिले निरंजन करैं अनंदा ॥४॥
रामानंद, कबीरा, दादू, सकल सिरोमनि जपै अगाधू ॥५॥
नांमदेव रैदास जु आदू, करैं बंदगी सबही साधू ॥६॥
पीपा, सोझा भवन हरिदासा, सनमुष ठाढे जगपतिपासा ॥७॥
नानक, सोमरु ज देव बीना धीफल अगट भये लैलीना ॥८॥
सकल साध हरि सेवा लागे, कीरति करत सकल अघ भागे ॥९॥
अगम अगाध अंत नहीं आवै, गरीबदास यू आरती गावै ॥१०॥

[२]

अलष निरंजन आरती तेरी, तेज पुंज हरि जीवनि मेरी ॥टेक॥
निराकार निरंजन रामां, तहां लैलीन भये जन नामा ॥१॥
अकल निरंजन कल्यो न जाई, तहा कबीरा रह्या समाई ॥२॥
परम सनेही प्राण निवासा, सनमुष ठाढे जन रैदासा ॥३॥
झिलि मिलि झिलि मिलि नूर प्रकासा, तहां गुन गावै दादू दासा ॥४॥
अपरम्पार पार नहीं आवे, दास गरीब तेरी आरती गावे ॥५॥

[३]

गुरु दादू की आरती कीजै, दरसन देषि जुगे जुगि जीजै ॥टेक॥
नूर तेज में तेरा बासा, झिलि मिलि चमकै जोति प्रकासा ॥१॥
कहाले आरती साधु गावैं दरसन देषि बहुत सुष पावैं ॥२॥
प्रेम पियाला भरि भरि पीजै, गरीबदास अपणा करि लीजै ॥३॥

[४]

आरती गुरुदेव तुम्हारी दरसन दीजै जाऊं बलिहारी ॥ टेक॥
नष सिष आरती करि हरि देवा आई मिलो मुझ अलष अभेवा ॥ १ ॥
तन मन मनसा हरि तुम पर वारी,दरसन दीजै देव मुरारी ॥ २ ॥
दरसन मांगों और न जांचौं, रोम रोम हरि गाऊं न नांचौं ॥ ३ ॥
पडदा षोलि हरि दरपन दीजै,
गरिबदास हरि अपणौं अंग लगाइ लीजै ॥ ४ ॥
दहदिस दीपक जोति प्रकासी,जन नरवद निज सेवि अविनासी॥१॥

रज्जबजी की आरती

(१)

आरती तुम्ह ऊपर तेरी, मैं कुछ नांहि कहा कहूँ मेरी ॥टेक॥
भाव भगति सब तेरी दीन्ही, ता करि सेव तुम्हारी कीन्ही ॥१॥
मन चित सुरति सबद सुनि तेरा, सो तुम्ह ले तुम्ह ही परि फेरा ॥२॥
आतम उपजि सौंज सब तुम्ह तैं, सेवा सकति नांहि कुछ हमतैं ॥३॥
आपणी आप प्राणपति पूजा, रज्जब नांहे कहण कूं दूजा ॥४॥१॥

[२]

आरती आतमरांम तुम्हारी, तन मन मनसा सौंज उतारी ॥टेक॥
दीपक दृष्टि गुरु की दीनी, घटा घट धीरज धुनि कीन्ही ॥१॥
ध्यान धूप हित की करि हारा, पाती पहुप अठारह भारा ॥२॥
नष सिष चदन नान्हां बांटै, केसरि करणी सौं हरि छांटै ॥३॥
ऐसी विधि उर अतरि सेवा, जन रज्जब क्या जांणै भेवा ॥४॥२॥

साधू सकल सिरोमनिसारा, राम नांम कहि भौजल पारा ॥ ११॥
करैं आरती हरि गुण गावैं, जन जगन्नाथ परमपद पा ॥१२॥

प्रागदासजी की आरती

[१]

ऐसी आरती करि करि जीजें, तन मन आतम वारणो कीजे ॥टेक
अभि अंतरि दरसन देपीजें,सनमुप रहि हरि सेवा कीजें ॥ १ ॥
अपणां आप समरपण कीजें, अविनासी रस भरि भरि पीजें ॥२
पावक नांव सुरति की वाती, अलप पुरुप तहा दिवस न राती ॥३
प्रगट देव सोई देषीजें, प्रागदास तहां आरती कीजें ॥ ४ ॥

नरबदजी की आरती

[१]

आरती निज निराकार की कीजे, पांच पचीसो बाती दीजे ॥टेक
सात समंद तत तेल मिलावौ, निर्मल काया दीप जगावौ ॥ १ ॥
विधि बनराई पुहप भड लावौ, तारे झिलिमिलि अंबर छावौ ॥२
नौबत घंटा अनहद सारा, सुरनर मुनिजन जै जै कारा ॥ ३ ॥
चंद सूर रथ षैंचै ठाढे, ब्रह्मा विष्णु महादेव गाढे ॥ ४ ॥

चैनजी की आरती

[५]

आनन्द आरती सुन्दरि साजे, नषशिष मंगल घंटा बाजे ॥ टेक ॥
निर्मल दीप होई उजियारा, रमिये राम अठारह भारा ॥ १ ॥

अनहद सबद संष तहा सारा, झालरि नाद करै झणकारा ॥ २॥
परम समाधि निरंतर लागै, भयो लेलीन निरंजन आगै ॥ ३ ॥
जगमगै जोति जगतपति आई, विमल विनाद महा सुष होई ॥४
सुरनर मुनिजन अंनत अपारा, तहा तेतीस करै जेकारा ॥ ५ ॥
गरजै गगन मगन व्है गावै, सेवग चैन तहां सिर नावै ॥ ६ ॥

[२]

आरती दादूदास तुम्हारी, तुम पुरवो सतगुर आस हमारी ॥टेक
प्राणपिंड नोछावरि कीजै, प्रसन होइ परम सुष दीजै ॥ १ ॥
प्रफुलित प्रथा मुदित गुन गाऊं, दीन होई चरनौं चित लाऊं ॥ २ ॥
दीन दयाल दयानंद स्वामी, सकल सिरामणि अंतरिजामी ॥ ३ ॥
वीनति इहै करा जिनि दूरी, चैन कहै मोहि राषि हजूरी ॥ ४ ॥

चतुरभुजजी की आरती

[१]

जै जै हो दीन दयाल रांम तुम्हारी आरती बनी ।
गुर पादु प्रसादि, निरंतरि हिरदै भगति सनी ॥
व्रह्मा विष्णु महेश्वर देवा,
सिर नावे कर जोडे ठाडे करे तुम्हारी सेवा ॥ टेक॥
गण गंधर्व सुरनर मुनि देवा, कवला गौरि गणेस ॥
चंद सूर दसौ दिसि दीपक, अस्तुति भाषै सेष ॥ १ ॥

पहुमी पवन अकास, अगनि जल आदि अंति संसार।
वेदे असंष नगारि जाके, सुजस करैं दरबार ॥२॥

ध्रू प्रहलाद कबीर नामदेव, दादू गोरषनाथ ॥
नानक धना सैन, रैदासा, पीपा जैदेव साथ ॥३॥

अगम अगाध अभै अविनासी, अविगति अलष अपार ॥
चतुभुज दास कहै कर जोडे, अबके दो दीदार ॥४॥

सुन्दरदासजी की आरती

[१]

आरती पारब्रह्म की कीजे, और ठौर मेरो मन न पतीजै ॥टेक॥
गगन मंडल मे आरती साजी, सबद अनाहद झालरि बाजी ॥१॥
दीपक ज्ञान भया प्रकासा, सेवग ठाढै स्वामी पासा ॥२॥
अति उछाह अति मगल चारा, अति सुष विलसै बारंबारा ॥३॥
सुदर आरती सुन्दर देवा सुन्दरास करै तहां सेवा ॥४॥

[२]

आरती कैसे करौ गुसांई, तुमही व्याप रहे सब ठांई ॥टेक॥
तुमहीं नीर कुंभ तुम देवा, तुम्ही कहियत अलष अभेवा ॥१॥
तुमही दीपक धूप अनूपा, तुमही घंटा नाद सरूपा ॥२॥
तुमही पाती पहुप प्रकासा, तुमही ठाकुर तुमही दासा ॥३॥
तुमही जल थल पावक पवना, सुन्दर पकरि रहे मुष मौना ॥४॥

जगाजी की आरती

[१]

साहिब साथ आरती जाणौं, बैठा ऊभां की लोक बखांणै ॥टेक॥

आदे आसणि सेसजी करै आरती जाप, ताकी महिमा सब कहै साहिब काटै पाप ॥१॥

जन प्रहलाद आरती कीन्हीं, जहां तहां बांचि अभै गति दीन्हीं ॥२॥

धू ध्यान धरि आरती कीन्ही, अविचल कीया राजगति दीन्हीं ॥३॥

दत गोरष महादेव आदू, करै आरती सबही साधू ॥४॥

उदरमांही आरती गाई, सुख कौं सुष दीन्हौं हरि आई ॥५॥

नाषिये लोढिये आरती कीन्हीं, कृष्ण आई भयौ लैलीनी ॥६॥

नामदेव कबीर आरती जानीं, गऊ जिवाइ अरु बालिदि आंणी ॥७॥

धनैं भगति आरती नपांणी, गेहूँ निपाया सारंगपाणी ॥८॥

सूर सनमुष आरती कीन्हीं, नैण दिया तब दुनिया धीनी ॥९॥

जन दादूजी आरती गाई, प्रगट भये जब हरि जी भाई ॥१०॥

जगिया यूं आरती जुगैजुग कहिये, गुर गोविन्द का चरणां रहिये॥११॥

कील्हणाजी की आरती

(१)

आरती परम पर आत्मदेवा, आतम भगति तुम्हारी सेवा ॥टेक॥

गगन मण्डल में बाजे बाजै, सुनि सिंहासन ब्रह्म बिराजै ॥१॥

दीपक अनंत गहरधुनि गावै, सहज समाधै दरसण पावै ॥२॥

जबलग भगवंत तबलग भगता, कील्हकरण महारसि माता ॥ ३ ॥

संतदासजी आरती

(१)

गुर गोविंद की आरती कीजै आरती करि करि जुगि जुगि जीजै॥टेक॥
काया कांसा थाल सजोऊ पांच पचीसो दीपक जोऊ॥ १ ॥
अनहद वांणी घट बजाऊ मन मनसा चित चवर ढुलाऊ॥ १ ॥
दिल देवल मे मूरति प्यारी, संतदास जन ना परिवारी॥ ३ ॥

हरिसिंहजी की आरती

(१)

करौं आरती कौन विधि देव तेरी चाकरी हीण मैं
दीन द्वारे पडौ,सेव की सकति कुछ नांहि मेरी॥ टेक॥
जाकै चंद सूरिज दोइ चिराक आगैं
षडा रहै सात समुद भऱ्या चरण तरै॥
दीवा की जोति कहा लगौं जगमगै,
कहा कुंभजल आंणों होई मेरे॥ १ ॥
जाके पवन को पषो निति सहज चलिबो करै,
कोड तैतीस सब हाथ जोडै॥
अठारह तार बनराइ फूलै फलै॥
कोण विधि पान फल फूल तोडै॥ २
जाकौ सेस सुमिरन रटै, वेद ब्रह्मा पढै
सुरसती लेष लिपि, पार नहीं पावै॥

संकर सुधि ना लहै, अगम सोऊ कहै।
जांण राई जीव किहि विधि रिझावै ॥ ३ ॥
पांन पाती जिती जगमें दीसै इती,
तुमतैं नांहि छांनै मुरारी ॥
कहांमें हरिसिंघ चढ़ावै, वीनती कहतां न आवै,
कीजै दीन दयाल चिता हमारी ॥ ४ ॥

कहाले आरती करों देवा, हरि निर्गुण सब गुणमई सेवा ॥टेक॥
सुतिग भरिया नीरस वाया मछ कछ ता याहै वाया ॥ १ ॥
पहुत वासना भवर विटाली सरप विलंवे चंदन डाली ॥ २ ॥
धूप दीप पावक ले भोग, ए सब नांहि आरती जोग ॥ ३ ॥
हरिसिध तन मन हरि कौं दीजै,राम की आरती इहि विधि कीजै ।४
या जांणें जीव करि आरती, जांणनहारा त्रिभुवन पति ॥ टेक॥
आप उपाये सम्र समदा, दीपक दोई धरे रवि चंदा ॥ १ ॥
आव पवन करि चवर ढुलावै,अठारह भार वन पुहप चढ़ावै ॥ २ ॥
घटा जिती जिती घट सागा, सब का आग बजावण हागा ॥ ४ ॥
जीवन जाणैं आरती तेरी, हरिसिघ की ले हरिदा केरि ॥ ४ ॥

केवलदासजी की आरती

अलप पुरिष की आरती कीजै, जुग जुग राम अमर पद लीजै॥टेक॥
चित चदन मनसा की माला, ध्यान धूप मन पहुप रिसाला ॥ १ ॥
दिल दीपक तन तेल विचारा, आतम जोति भया उजियारा ॥ २ ॥
अखड ब्रह्म सो इष्ट हमारा, सकल लोक जाका विसतारा ॥ ३ ॥

जोति सरूप जगत उजियारा, नाहि सुमरि जन उतरे पारा ॥ ४ ॥
झिलि मिलि नूर तेज प्रकासा, जहां केवल कों देह निवासा ॥५॥६६॥

सुषदेवजी की आरती

अटल आरती है अविनासी, और सकल भर्म पषि जासी ॥टेक॥
देवी देवल भर्म पसारा, राम विनां नांही निसतारा ॥ १ ॥
आदि अंति मधि आरती जाकी ब्रह्मा विष्णु महादेव साषी ॥ २ ॥
परा परी परम गुर देव, राम रटहुँ जन कहै सुषदेव ॥ २ ॥

गोरखनाथजी की आरती

नाथ निरजन आरती गाऊ, गुर दयाल आज्ञा जो पाऊ ॥ टेक ॥
जहां अनंत सिद्धां आरती गाई जहां जम की वाव नेडी आई ।१।
जहां जोगेश्वर हरि को ध्यावैं, चंद सूरज जहां सीस नवावैं ॥ २ ॥
मछिंद्र प्रसादें गोरष आरती गावै, तेज झिलिमिलि
दीसै तहां और न आवै ॥ ३ ॥ १ ॥

दत्तजी की आरती

[१]

अवधू बाहरि कहा दिषावै भाई अंतरि आरती करहु ल्यो लाई ॥टेक॥
हरि हरि कहता दत हरि माहि समाना ऐसी आरती करहु तुम्ह दाना ॥१॥
गोरषदत्त अवधूत अनूपा आरती करता पारि पहूँता ॥२॥
निरंजन की दत्त आरती गावै नूर झिलिमिलि दीसै कहूँ अंत न आवै ॥३॥

धन्नाजी की आरती

[१]

गोपाल तेरा आरता,जो जन तेरी भगति करते तिन के काज संवारता ॥

दालि सीधा मागो घीव. हमारा पुशी करै नित जीव ॥

पनही छादन छीका. नाज मागौं सत सीका ॥

गऊ भैंस मागौं लवेरी. इक ताजनी तुरी चंगेरी ॥

घरकी ग्रिहनि चगी. जन धना लेवै मंगी ॥ ४ ॥

[२]

अविगति बेहदी तेरा आरता. हदमें कथन जान ।

हदमें पवन अगनि जल धरति. हदमैं अंबर धारता ॥

जहा जहा ध्यान कीया मिलि संता. तिन के कारिज सारिता ॥ टेक

कोई कहै धरनी को करता कोई कहै गिरिवरि धारी ।

हमतौ जाण्या अघट एकरस. सब करि सरणि तुम्हारी ॥ १ ॥

ऐसी अविगत बात तुम्हारी किहि विधि आरती कीजै ॥

जो उतपति ब्रंहाड पंडमें. मो सब वारणैं दीजै ॥ २ ॥

तुम्ह तो अघट घड्या नहीं मानै, अमाप माप नहीं आवै

तुम निरधार तुम सबही दास धना तो गावै ॥ ३ ॥ २ ॥ ७२ ॥

प्रेमदासजी की आरती

तन देवल मे बोलैं देवा पांचों पच्चा लागा सेवा ॥२॥
किवाड़ भरम का सतगुर पोया रामनाम का दीपक जोया ॥३॥
गगन मडल मे बाजें तूरा उलटि पवन जहा ऊगे नूरा ॥४॥
शबद झालरि झणकार लगाई प्रेमदास प्रभु आरती गाई ॥ ५ ॥

षेमदासजी की आरती

आरती राम निरजन तेरी तन धन मन नोछावरि फेरि ॥ टेक ॥
अकल पाट पर्म आप विराजै. सुरनर सकल आरती साजै ॥ १ ॥
सिध साधिक मुनिजन ल्योलावै, धू प्रह्दिलाद सेस सुष पावै ॥ २ ॥
सबद अनाहद घटा बाजै, निस वासुरि धुनि गगनसु गाजै ॥ ३ ॥
सकल साध चित चवर दुलावै षेम जुगे जुगि दरसन पावै ॥ ४ ॥

षींवाजी की आरती

आरती अविगति देव की कीजे गगन मण्डल में भावरि लीजे ॥ टेक ॥
कोमल कँवल प्रेम जल भरिया अगम ज्ञान उर दीपक धरिया ॥ १॥
चित चदन सुरति सेती लावै पन्च सषी मिलि मगल गावैं ॥ २ ॥
पद पकज सूषिम कली लाई मनसा मालनि माल ले आई ॥ ३ ॥
लै झालरि सो लहै तूरा परदछन दे चदर सूरा ॥ ४ ॥
नषसिष सकल सौंज सब फेरी षींवा आरती अविगति केरी ॥ ५ ॥

इति श्री सर्व आरती सम्पूर्ण ।

सुनहरी साखियें

ये संगी दिन दोय के प्यार करें सब कोय ॥
अन्त काल में को नहीं जगन्नाथ कहे भोय ॥ १ ॥

तन मन सूं सेवा करे, मानत है भरतार ॥
अन्त काल में परशुराम, कबहु न चाले लार ॥ २ ॥

रज्जब यात अजब हैं, सतगुरु मेला नांहि ॥
माता पिता असंख्य है, लख चौरासी मांहि ॥ ३ ॥

गुरु समान दाता नहीं, गुरु समान नहिं देव ॥
गुरु कृपा तें पाइये, "मोहन" अलख अभेव ॥ ४ ॥

गुरु तरवर गोविन्द जल, सेवग फलां समान ॥
भाव बींट लागा रहे, "खोजी" सो सिख जाण ॥ ५ ॥

सत्य रूप जिन जाणिया, सतगुरु उन का नाम ॥
जिन के संग सिख ऊधरे, नानक हरि गुण गाम ॥ ६ ॥

गुरु वचन नासति करे, सो कमसल कुढोर ॥
"राघो" मन परतीति बिन भयो शाह तें चोर ॥ ७ ॥

जादिन बुधि बल सब घटै, होय बिरानी देह ॥
तादिन जिन "वाजिन्द" को, तूं अपना करलेह ॥ ८ ॥

जाति, लाभ, कुल, रूप, तप, बल, विद्या अधिकार ॥
इन का गर्व न कीजिये, यह मद अष्ट प्रकार ॥ ९ ॥

केस कनोती ऊजली, कहु "संमन" किहि भाई ॥
मौत संदेशा देन को, कान विलम्बिया आइ ॥ १० ॥

बुढापो सब में बुरो, "नापो" रहे नगं ॥
हथां पा अलसावणो आदर नहीं वगं ॥ ११ ॥

अब घी नीर नन अंजली, टपकत सासे मास ॥
आता है हरि नाम विना, ओसर "ईसरदास" ॥ १२ ॥

अपनी चौकी उठ गई, चल गये सेवग सन्त ॥
"भगता" जे दिन जीवणां, हरि भज बैठ इकन्त ॥ १३ ॥

औरों को छोटा गिणो, आपणा मोटा मान ॥
यही अविद्या जीवकी "घडसी" सरे न काम ॥ १४ ॥

सन्त मुक्ति के पोलिया, इन सु कीजे प्यार ॥
कूंची इन के हाथ है, "सुन्दर" खोले द्वार ॥ १५ ॥

बरस मासलों पाहुणा, देखणा आये भाव ॥
कहु "कालू" कैसे रहे, मंवग वन का राव ॥ १६ ॥

कहा करु वैकुठ को, कलप वृच्छ की छांह ॥
"संमम" ढाक सुहावणा, जहा सज्जन गलबांह ॥ १७ ॥

प्यारा मीम् लोक में, आवे हिरदे राम ॥
"अमज" हरि की भक्ति बिन, सब दुनिया बेकाम ॥ १८ ॥

सहस्र अठ्यासी सप्त ऋषि, रहे चतुर नौ साथ ॥
अब "काल" कलजुग कला, दोय मिल्यां उत्पात ॥ १९ ॥

माग बडो अरु कुल बडो, नांही धरम दया ॥
"धीरम" फल उजाड का, वो बेकाम गया ॥ २० ॥

"जगजीवण" माला फिरै, बिन कर हिवडै मांहि ॥
तासु मरण के ऊपरै, दूजो सुमरण नांहि ॥ २१ ॥

सिरमें दई ग्याव की, क्रोध नहीं लवलेश ॥
फिर उल्टी पूजा करी, 'राघो' वे दरवेश ॥ २२ ॥

'पीपा' पारस परसतां, लोहा कंचन होइ ॥
सिध कै पासे बैठतां, साधक भी सिध होइ ॥ २३ ॥

खबर उदर में लेत है, दिन में बेर हजार ॥
'तुलसी' ता हरि वीसरे, ताके सर पैजार ॥ २४ ॥

नख सिख धड पैदा किया, जाणक चितरथ्या मोर ॥
'हरीदास' हरि वीसरे, सो बडा हरांमी खोर ॥ २५ ॥

(मनहर)

कामनी कनक तजे पूरन ब्रह्म ही भजे,
हरि गुन तन सजे तिंहू लोक जानिये ॥
हरिके दरस जीवे नितही अमृत पीवे,
माया न मन छीवे सोई विधि मानिये ॥
छाजन भोजन एतो तनहीं लगावे तेतो,
संचो न संभ्क को भोर चिंता नहीं आनिये ॥
तुरक हिन्दू थें न्यारो सदाही राम पियारो,
दादू जन उजियारो 'गोपाल' वखानिये ॥ १ ॥

(दासजी का १ पद)

हमारे तीरथ रूप नरानो ।
दादूदास वसै तिहिं ठाहर वैकुंठथे अधिकानों ॥ टेर ॥

शीतल छाया निकट सरोवर, विचमें चौक रमाणो ।
हरिजन हंस रहे तिहिं ठाहर, सुख सागर मन मानों ॥१॥

भैराणो है मणिकर्णिका, व्है कासी प्रस्थानों ।
गरीबदास तहां आप विराजे, अनभै अंग गनानो ॥ २ ॥

आवत सन्त भले गुण भगावत, कीर्त्तन कथा सयानो ॥
जै जै कार होत है जगमें, गुरु को पाट पुजानो ॥ ३ ॥

पावन होत परस पद पारस निसदिन राम भजानों ॥
स्वामीजी के चरण छुवतही, पिंडते पाप पलानों ॥ ४ ॥

मध पाणी मुकता जल भोजन, आवत जगत जहानों ॥
चारों वर्ण पंथ षट्दर्शन, काहू गांठन खानो ॥ ५ ॥

जिहिं के उपजे भक्ति भावना, आप भुगतावत दाणां ॥
देश देश तें हरिजन आवत फागन मास ठिकानो ॥ ६ ॥

होत मिलाप परस्पर दर्शन, संतन को घमसानों ॥
दास गुलाम नहाय सत्संगति करत जनम सफलानों ॥७॥

—: समाप्त :—